चन्दामामा
मार्च १९६६
75 P

दुधमुँहे
बच्चों के लिये
डाबर
की नई देन....
डाबर
जन्मघूँटी
डाबर
(डा० एस० के० वर्म्मन) प्राइवेट लि०,
कलकत्ता-२६

Statement about ownership of CHANDAMAMA (Hindi)
Rule 8 (Form IV), Newspapers (Central) Rules, 1956

1. *Place of Publication*	:	'CHANDAMAMA BUILDINGS'
	:	2 & 3, Arcot Road, Vadapalani, Madras-26
2. *Periodicity of Publication*	:	MONTHLY 1st of each Calendar month
3. *Printer's Name*	:	B. NAGI REDDI,
Nationality		INDIAN
Address		The B. N. K. Press (Pvt.) Ltd., 2 & 3, Arcot Road, Vadapalani, Madras-26
4. *Publisher's Name*	:	B. VISWANATHA REDDI,
Nationality		INDIAN
Address		Managing Partner. Sarada Binding Works, 2 & 3, Arcot Road, Vadapalani, Madras-26
5. *Editor's Name*		CHAKRAPANI (A. V. Subba Rao)
Nationality		INDIAN
Address	:	2 & 3, Arcot Road, Vadapalani, Madras-26
6. *Name & Address of individuals*	:	SARADA BINDING WORKS:
who own the paper	:	PARTNERS, 1. Sri B. Viswanatha Reddi, 2. Sri B. L. N. Prasad, 3. Sri B. Venugopal Reddi, 4. Sri. B. Venkatarama Reddi, 5. Smt. B. Seshamma, 6. Smt. B. Rajani Saraswathi, 7. Smt. A. Jayalakshmi, 8. Smt. K. Sarada,

I, B. Viswanatha Reddi, hereby declare that the particulars given above are true to the best of my knowledge and belief.

1st March, 1966

B. VISWANATHA REDDI,
Signature of the Publisher

ब्रिटेनिया
ग्लैक्सो

सिर-दर्द
चाहे जितने जोर का हो, एक
स्थानीय दर्द है...

अमृतांजन

दर्द को फौरन दूर करता है

स्थानीय दर्द को दूर करने के लिये दवा खाने की क्या जरूरत है? दर्द की जगह पर अमृतांजन मलिये—दर्द, जाता रहेगा, आप राहत महसूस करेंगे। अमृतांजन पेन बाम वैज्ञानिक मिश्रण वाली १० दवाइयों की एक दवा है—मांस पेशियों के दर्द, सिर दर्द, मोच और जोड़ के दर्द के लिये बिलकुल अचूक है, निर्दोष है, प्रभावकारी है। अमृतांजन का इस्तेमाल सीने में जमा कफ, सर्दी और जुकाम में भी जल्द से जल्द आराम पहुँचाता है। एक बार इतना कम चाहिये कि इसकी एक ही शीशी आपके घर में महीनों चलती है। आप भी अमृतांजन की एक शीशी बराबर ही पास रखिये। ७० वर्षों से भी ज्यादे दिनों से अमृतांजन एक घरेलू दवा के रूप में विख्यात है।

अमृतांजन १० दवाइयों की एक दवा—दर्द और जुकाम में अचूक।

अमृतांजन लिमिटेड, मद्रास • बम्बई • कलकत्ता • दिल्ली

JWT/AM 2815A
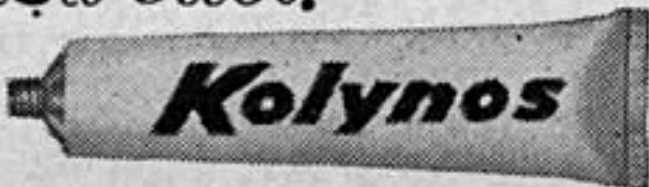
चन्दामामा

संचालक : चक्रपाणी

शिवाजी युग भारत के इतिहास में सुवर्ण युग है। उन्होंने जिस प्रकार राष्ट्र का संगठन किया, शायद कम ही ने संसार में किया हो।

देश को समर्थ, स्वावलम्बी बनाने के लिए अथक परिश्रम और जागरुकता की आवश्यता होती है— यह शिवाजी युग में स्पष्ट रूप से निरुपित हुआ।

आज परिस्थितियाँ भिन्न हैं, पर देश को संगठन और स्वावलम्बन की, उतनी ही आवश्यकता है, शायद अधिक की, जितनी की शिवाजी के समय में थी।

"भारत का इतिहास" में, हम इस बार शिवाजी युग में प्रवेश कर रहे हैं।

वर्ष : १७ मार्च १९६६ अंक : ७

भारत का इतिहास

देवगिरि में जब यादवों का राज्य था, मराठाओं ने उत्तम राजनैतिक और साँस्कृतिक परम्पराओं का पालन किया। परन्तु अल्लाउद्दीन के काल में, रामचन्द्र देव का पतन होने के कारण वे अपनी स्वतन्त्रता खो बैठे। लेकिन चालीस वर्ष के बाद फिर उनमें चेतना आ गई। बहमनी काल में और उसके बाद की सल्तनतों में भी उन्होंने भाग लिया, १७ वीं सदी के उत्तरार्ध में भारत के इतिहास में ही अत्यन्त महत्वपूर्ण भूमिका अदा की। इस सदी में, मराठाओं में एक प्रकार का जातीय संगठन आया। इस संगठन का स्रष्टा यद्यपि शिवाजी थे, पर उनसे पहिले भी यह प्रारम्भ हो गया था।

संगठन के अनुकूल महाराष्ट्र की नैसर्गिक स्थिति भी थी। महाराष्ट्र को आसानी से जीता नहीं जा सकता था। उत्तर दक्षिण में सह्यादि, पूर्व पश्चिम में विन्ध्या पर्वत, सतपुड़ा पर्वत श्रेणी, नर्मदा, ताप्ती और अनेक अजेय पर्वत दुर्ग महाराष्ट्र के अंगरक्षक से हैं। भूमि पथरीली है। कृषि के अनुकूल नहीं है। इसलिए मराठाओं में, न अलस है, न विलासप्रियता ही। उनमें आत्म विश्वास, परिश्रम, निष्कपटता, धैर्य, कष्ट-काल में सन्तोष की भावना, सामाजिक समता, अभिमान वगैरह अधिक हैं। एक नाथ, तुकाराम, रामदास, वामन पंडित जैसे धार्मिक सुधारकों ने सदियों से, मराठाओं को सर्वमानव समानता और देशभक्ति का सन्देश दिया था। उन्होंने कहा कि कुल और पद के कारण ही किसी को प्रतिष्ठा नहीं मिलनी चाहिए। उन्होंने कर्म मार्ग का अनुसरण किया।

उनके उपदेशों के कारण, मराठाओं में एक प्रकार की चेतना आई, जो क्रान्ति के लिए प्रारम्भ-सी थी। शिवाजी के गुरु समर्थ रामदास ने अपने ग्रन्थ "दासबोध" द्वारा मठों में शिष्यों को दिये गये उपदेशों द्वारा सामाजिक सुधार, जातीय पुनरुन्नयन के लिए काफ़ी योगदान दिया। मराठाओं की एकता के पीछे, मराठी के साहित्य का भी कम हाथ न था। सामाजिक सुधारकों ने अपने गीत मराठी भाषा में ही लिखे थे। १५,१६ सदी में, मराठी में शक्तिशाली साहित्य रचा गया और उसके कारण समाज में, एक नया उत्साह जनमा। महाराष्ट्र में एक भाषा, एक संस्कृति और एक जीवन १७ वीं शताब्दी में ही संगठित रूप से विकसित हो गये। शेष एक राज्य था और उसकी शिवाजी ने स्थापना की। उसके लड़कों ने दिल्ली के दुराक्रमणों का काफ़ी देर तक मुकाबला किया। पेशवा के समय में, महाराष्ट्र साम्राज्य का विस्तार भी हुआ।

यह सच है कि दक्षिणी सल्तनतों में काम करने के कारण, उनको राजनैतिक संगठन और युद्धतन्त्र में काफ़ी अनुभव मिल गया था। शिवाजी का पिता शाहजी अहमद नगर के सुल्तान की सेना में घुड़सवार बनकर शरीक हुए। फिर वे तरक्की करता गया। उसी सल्तनत में, उसने बड़ी जागीर भी पाली। निज़ामशाही के अन्त काल में, तो वे इतने हैसियतमन्द हो गये थे कि वे जिसको चाहे, उसको गद्दी पर बिठा सकते थे। उनके प्रभाव पर और डाह भी करने लगे। इसलिए अहमद नगर जब शाहजहाँ के नीचे आ गया, तो वे बीजापुर सुल्तान के यहाँ काम करने लगे। यहाँ भी उन्होंने बड़ा यश

कामाया। कर्नाटक प्रान्त में भी एक जागीर पायी। यही नहीं, अहमद नगर में काम करते समय, जो उन्होंने जागीर पायी थी, पूना में, वह भी उन्हीं के पास रही।

शिवाजी, शाहजी की बड़ी पत्नी के लड़के थे, शिवनेर पहाड़ के किले में वे १६३० में पैदा हुए। (कुछ ऐतिहासिकों का कहना है कि वे १६२७ में पैदा हुए थे) बीकानेर दुर्ग के पुस्तकालय में मिली जन्मकुण्डली के अनुसार १६२७ ही ठीक मालूम होता है। शाहजी अपनी बड़ी पत्नी जीजाबाई और लड़के शिवाजी को दादाजी खोण्डदेव नाम के ब्राह्मण को सौंपकर, अपनी छोटी पत्नी के साथ, अपनी नयी जागीर को चला गया।

जीजाबाई बहुत ही धार्मिक थीं, उन्होंने अपने लड़के को पुरानी वीर गाथायें, नीति कथायें सुनाकर उनमें देशाभिमान प्रज्वलित किया। शिवाजी के जीवन पर उनकी माता का बड़ा प्रभाव था. दादाजी खोण्डदेव ने भी धीरज और साहस शिवाजी में भरे।

हम नहीं जानते कि शिवाजी ने कुछ पढ़ा था कि नहीं। पर वह बड़े धीर और वीर थे साहसी थे। विदेशीयों से देश को स्वतन्त्र करने का उनका दृढ़ संकल्प था। पश्चिम घाट में मावल नाम का प्रान्त है। उसकी लम्बाई ९० मील और चौड़ाई १२, १४ मील है। वहाँ पहाड़ी जाति के लोग रहते हैं। शिवाजी का, इन पहाड़ी जातिवालों से निकट का सम्बन्ध था। बड़े होने पर, उनको इस सम्बन्ध से काफ़ी लाभ रहा। उनके साथी, अच्छे सैनिक और सेनापति मावले ही थे।

नेहरू की कथा

[२०]

जवाहर के अपने साथियों के साथ जैतों पहुँचते ही, वहाँ ब्रिटिश शासक ने उनको एक आदेश पत्र दिखाया। उस आदेश के अनुसार जवाहर और उनके साथियों को नाभा रियासत में घुसने को मना किया गया था और अगर प्रवेश कर भी लिया था, तो उनको तुरत वापिस चले जाने को कहा गया था।

चूँकि उनको वे आदेश नाभा में ही दिया गया था, इसलिए प्रवेश निषेध का कोई अर्थ ही न था। वापिसी के लिए गाड़ी के न मालूम होने के कारण तुरत वापिस चला जाना भी सम्भव न था। जवाहर ने यही उस पोलीस अधिकारी से कहा, जिसने उनको नोटिस दिया था। यह भी बताया कि वे जत्थे के साथ नहीं आये थे। न उनका उद्देश्य नाभा की आज्ञाओं का उल्लंघन करना ही था। तुरत पोलीस ने उन तीनों को पकड़ लिया और उनको लोकअप में रख दिया।
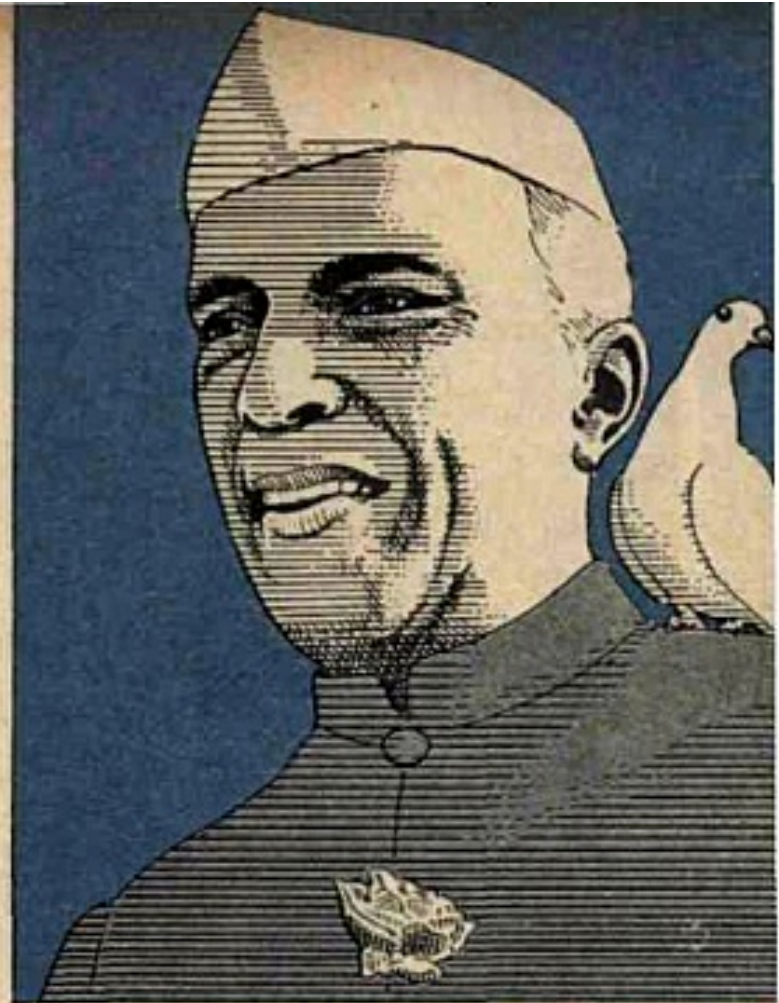
दिन-भर वे लोक अप में रहे। शाम को पोलीस उनको स्टेशन तक चलाकर ले गयी। सन्थानं के बायें हाथ और जवाहर के दायें हाथ को मिलाकर हथकड़ी लगायी गयी और उससे लगी हुई जंजीर को पकड़कर, एक पोलीस का सिपाही आगे आगे चला। गिड़वानी को भी हथकड़ियाँ लगायी गयी। वे उन दोनों के पीछे पीछे आ रहे थे।

इस प्रकार उन तीनों को जवाहर के शब्दों में कुत्तों की तरह जैतों की गलियों में चलाया गया। वह रात उन्होंने
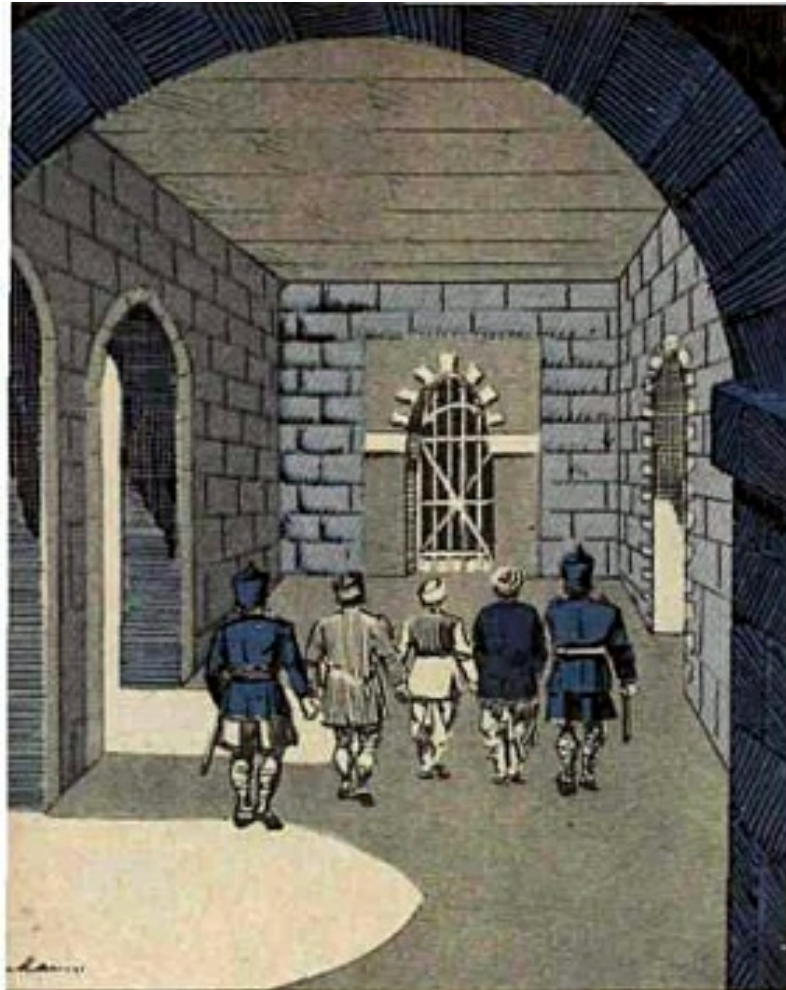
तीसरे दर्जे की भीड़ में और लोकअप में बितायी। अगले दिन नाभा जेल में पहुँचाने के बाद उनकी हथकड़ियाँ खोली गईं।

जिस जेल की कोठरी में वे रखे गये, वह बहुत गन्दी और बदबूदार थी और छत इतनी नीची थी कि करीब करीब उसे हाथ से छुआ जा सकता था, रात को वे फ़र्श पर ही सोये। उन पर चूहे आदि फुदकते रहे।

दो तीन बाद उनकी सुनवायी शुरु हुई और वह बड़े हास्यास्पद रूप से चली, न्यायाधिकारी को अंग्रेजी तो आती ही न थी, शायद लिखना पढ़ना भी न आता था। कई दिन सुनवायी होती रही पर जवाहर ने कभी उसको कागज़ पर कलम न रखते देखा।

सुनवायी उर्दू में हुई, जवाहर और उनके साथी, यदि कोई अर्ज़ी देते तो न्यायाधिकारी उनका कोई जवाब न दिया करता। अगले दिन वे किसी और की लिखावट में वापिस आतीं।

जवाहर आदि पर आज्ञा उलंघन के कारण मुकदमा चल रहा था। सुनवायी हो ही रही थी कि उन पर षड़यन्त्र का भी आरोप लगाया गया। षड़यन्त्र के लिए शायद चार आदमियों की ज़रूरत थी और ये तीन ही थे। इसलिए एक सिख को जिसको वे जानते तक न थे, इसमें फंसाया गया। इस षड़यन्त्र की सुनवायी एक और जगह हुई।

इस षड़यन्त्र के बारे में अपराधियों को कोई सूचना तक न दी गयी थी, उनकी पैरवी के लिए कोई वकील भी न नियुक्त था। यह देख नेहरू जी को आश्चर्य हुआ। जवाहर ने जब इसकी शिकायत की, तो जज ने कहा कि किसी नाभा

लायर को नियुक्त किया जायेगा। क्योंकि बाहर के वकीलों को, नाभा में प्रेक्टीस करने की मुमानियत थी। जवाहर आदि ने तंग आकर कहा—"आप जो चाहे कीजिये, हम इस मुकदमे में हिस्सा न लेंगे।"

परन्तु यह सम्भव न हुआ। जब उनके बारे में इधर उधर के सफेद झूट बोले जाने लगे, तो जवाहर आदि, गवाहों के बारे में अपनी प्रतिक्रिया बताते। कुछ दिनों तक दोनों मुकदमें चलते रहे। इस बीच ब्रिटिश शासक के प्रतिनिधि जेल सुपरिन्टेन्डेन्ट ने आकर बताया कि यदि जवाहर आदि ने यह जाहिर किया कि नाभा में आकर उन्होंने गल्ती की थी, तो उन पर लगाये गये आरोप वापिस कर लिए जायेंगे।

जवाहर ने कहला भेजा ऐसी कोई गल्ती उन्होंने नहीं की थी, जिसके लिए वे अफसोस जाहिर करें, उल्टे नाभा सरकार को ही उनसे माफ़ी माँगनी चाहिए।

गिरफ्तार होने के पन्द्रह दिन बाद दोनों मुकदमें समाप्त हुए। चूँकि उन्होंने आत्मरक्षा न की थी, इसलिए वह सारा समय अभियोगों की चर्चा में ही लगा। इस चर्चा के बाद अभियुक्तों ने एक निवेदन पत्र
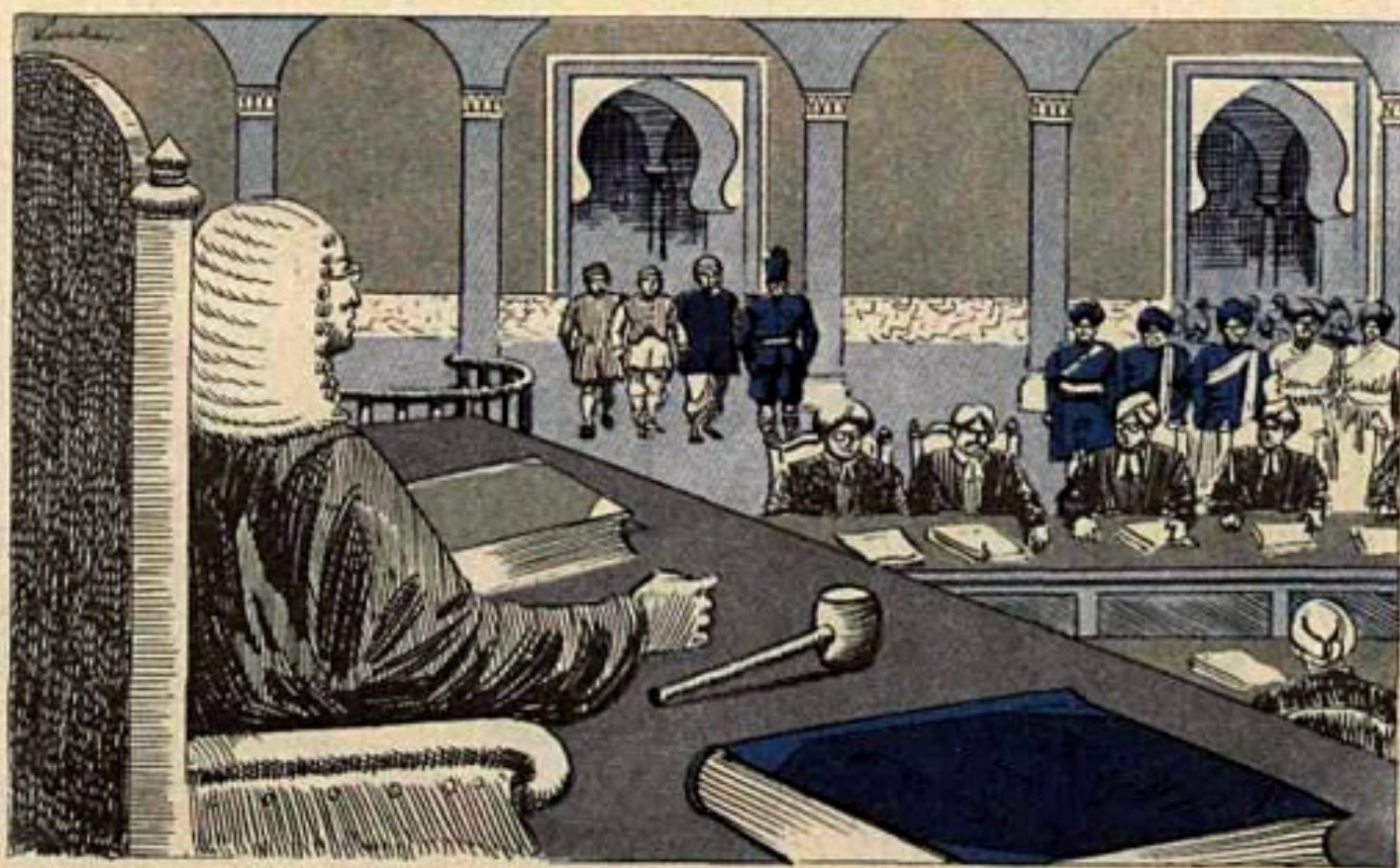
भेजा, उसके पढ़ने से पहिले ही, मोटा-सा फैसला दे दिया गया। दोनों मुकदमों में मिलाकर उनको दो वर्ष की सजा दी गई।

इस अनुभव के द्वारा जवाहर यह जान सके कि रियासतों में, ब्रिटिश सरकार किस प्रकार शासन कर रही थी। पोलीसवालों को न्याय विभाग का डर न था, परन्तु न्याय विभाग पोलीसवालों के सामने काँपता था। क्या हुआ नहीं मालूम। फैसला सुनने के बाद ही जेल सुपरिन्टेन्डेन्ट ने उन तीनों को रिहा कर दिया और उनको रेल स्टेशन भेज दिया गया। जल्दी ही अम्बाला जानेवाली गाड़ी आई। वे उसमें सवार हुए। जवाहर अम्बाला से दिल्ली पहुँचे और वहाँ से अल्हाबाद।

पन्द्रह दिन जेल में रहने के कारण तीनों बीमार हो गये। बीमारी यद्यपि बड़ी थी, तो भी जवाहर तीन चार सप्ताह में ठीक हो गये। गिड़वानी और सन्थानं ने इससे अधिक समय लिया।

यह नाभा की गड़बड़ी इसके साथ समाप्त न हुई। छः महीने बाद गिड़वानी ५०० आदमियों का जत्था लेकर जैतो पहुँचे। फिर गिरफ्तार किये गये और बिना मुकदमे के ही, उनको जेल में डाल दिया गया। उनका स्वास्थ्य बिल्कुल खराब हो गया। एक साल बाद उनको रिहा किया गया। गिड़वानी की गिरफ्तारी के बाद, जवाहर ने भी जाना चाहा। पर मित्रों की सलाह पर उन्होंने वैसा न किया। जवाहर बाद में यह जानकर बड़े शर्मिन्दा हुए कि नाभा जेल के भय के कारण ही उन्होंने मित्रों की सलाह मानी थी।
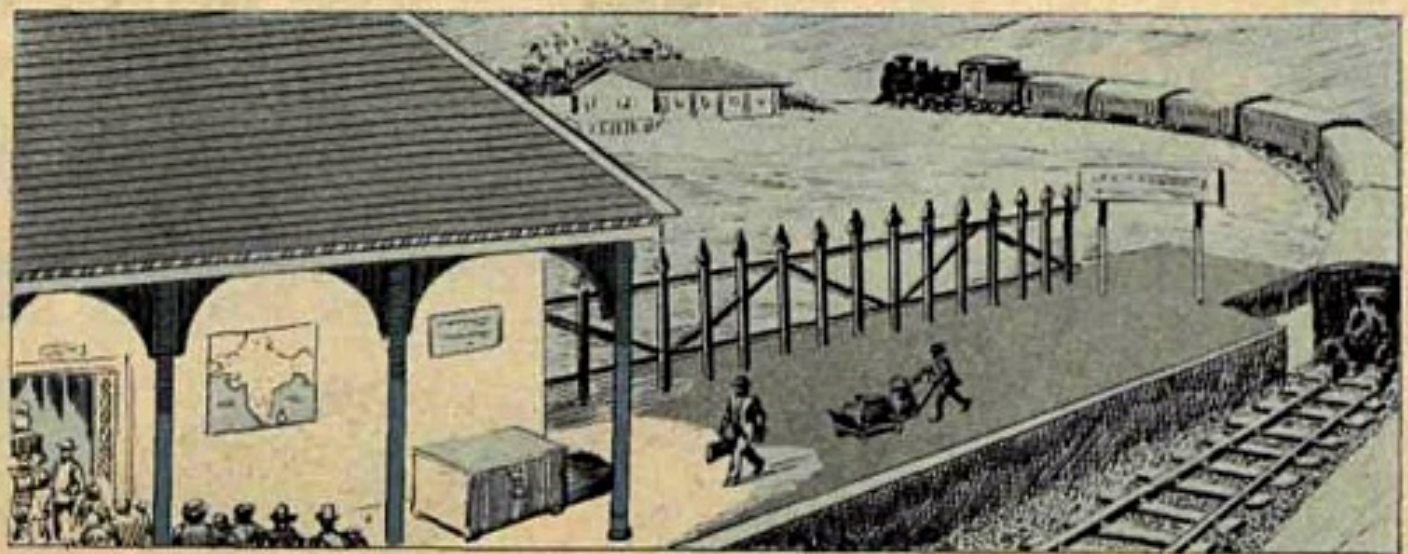
नवाबनन्दिनी

[७]

अयाशा को अपने आप आया हुआ देख, मानसिंह ने कहा—"तुम मेरी लड़की की तरह हो। यदि तुम कुछ कहना चाहती हो, तो निस्संकोच कहो।"

"कहने के लिए तो कुछ भी नहीं है। आपके अन्तःपुर में, कुछ दिन रहने के लिए मुझे बिल्कुल भी संकोच नहीं है।" अयाशा ने कहा।

"तुम्हारे पास तो कहने के लिए कुछ नहीं है, पर मुझे तुमसे बहुत कुछ सुनना है।"

"आप क्या क्या जानना चाहते हैं। पूछिये।"

"तुम अपने सब लोगों को उड़ीसा में छोड़कर, क्यों पटना आयी हो?"

"आपके लड़के जगतसिंह को कैद से छुड़ाने के लिए आयी हूँ!"

"किस तरह तुम वह काम करना चाहती हो?"

"युवराज से, बादशाह के लिए एक आवेदन पत्र भिजवाकर...."

"मैं सूबेदार हूँ, तो मेरे बिना जाने कैसे बादशाह के पास आवेदन पत्र भेजोगी?"

"आप ही ने तो स्वयं उनको दण्ड दिया है! फिर क्या उनके विरुद्ध जो कुछ

दामोदर मुखर्जी

कार्यवाही हो रही है, उसमें क्या आप मदद करेंगे? अगर आप यह करेंगे, तो लोग क्या आपकी हँसी नहीं उड़ायेंगे?"

"क्या आवेदन पत्र तैयार हो गया है?"

"वह कभी का तैयार हो चुका है, अब तक वह प्रयाग से परे पहुँच चुका होगा...."

"क्या जगतसिंह के जाली दस्तखत के साथ?"

"नहीं, जगतसिंह ने कैद में उसे पढ़कर, उस पर स्वयं दस्तखत किया है।"

"जब वह कैद में है, तो कैसे उसके पास यह आवेदन पत्र पहुँच सका?"

"कैद के अधिकारी को बड़ी सारी घूँस देकर।"

"सचमुच तुम बड़ी लगनवाली हो। क्या तुमने इस आवेदन पत्र को बादशाह तक पहुँचाने के लिए आवश्यक प्रबन्ध कर दिये हैं न?"

"कर दिये हैं, ज्योंहि वह दरबार में पहुँचेगा, त्योंहि वह बादशाह के पास पहुँचा दिया जायेगा। ज़रूरी हुक्म भी दे दिया जायेंगे---कुछ भी सन्देह नहीं है कि काम हमारे अनुकूल ही होगा।"

यह सुन मानसिंह को बड़ी ख़ुशी हुई। उसने अपने लड़के को कैद से छोड़ने का निश्चय कर लिया था, पर उसके लिए कोई समुचित उपाय नहीं सोच पा रहा था। यदि जगतसिंह की रिहाई के लिए बादशाह का हुक्म आता है, तो चाहिए ही क्या?"

"मैं, यह जानना चाहता हूँ कि तुम क्यों इतना कष्ट उठाकर, यह कर रही हो।" मानसिंह ने कहा। अयाशा ने बिना जवाब दिये, सिर झुका लिया।

"शायद तुम कहना नहीं चाहते हो? खैर, मैं तुमसे वह बात न पूछूँगा। जगतसिंह को क्या तुमने कैद में देखा है?"

"नहीं तो...."

"क्या तुमने अपने बारे में उसको खबर पहुँचाई है?"

"नहीं तो...."

"जब वह तुम्हारी मेहनत के कारण, छुट जायेगा, तब क्या उसको देखोगी?"

"नहीं...."

मानसिंह ने जो अयाशा और जगतसिंह के प्रेम के बारे में सुन रखा था अयाशा का जवाब उसके मुताबिक ही था।

"बेटी, मुझे बहुत अफसोस है कि राजकीय परिस्थितियों के कारण, मुझे तुम्हें कुछ दिन कैद में रखना होगा। उड़ीसा में पठानों ने युद्ध शुरु कर दिया है। मैं कल वहाँ जा रहा हूँ। उस युद्ध के समाप्त होने तक तुम मेरे साथ ही रहो। क्या इस युद्ध के बारे में तुम कुछ कहना चाहती हो?" मानसिंह ने अयाशा से पूछा।

"ये बातें स्त्रियों को भला क्या मालूम होंगी?"

"क्या उस्मानखान को कुछ बताना चाहती हो?"

"क्या है? नवाब साहसी और पराक्रमी है। मेरे लिए उसको सलाह देना दुस्साहस होगा। वह जानता है, जो वह कर रहा है, उसका क्या परिणाम होगा। वह शायद उसके लिए तैयार है।"

युद्ध से लौटने के बाद, तुमसे बातें करूँगा। अब मुझे बहुत काम हैं। ताज़खान को अपने घर भेज दो।" कहता, मानसिंह चला गया। ताज़खान भी अपने घर चला गया।

"बड़े पैमाने पर युद्ध की तैयारी करके, मानसिंह उड़ीसा गया। वर्धमान से सैय्यदखान भी बड़ी सेना लेकर आया। पठानों ने भी कम तैयारी न की थी।

फिर भी पठान खूब लड़े। भयंकर युद्ध हुआ। पर वे हरा दिये गये। बनपुर की विजय से मानसिंह सन्तुष्ट न हुआ। वह किले के बाद किला, नगर के बाद नगर लेता गया। इस तरह उसने सारे उड़ीसा पर ही कब्जा कर लिया। जलेश्वर, कटक, पठानों की राजधानी, स्वर्ण दुर्ग मुगलों के आधीन हो गये। हर किले पर मुगलों का झन्डा फहराने लगा। उस्मानखान को आखिर हार माननी पड़ी। सुलेमानखान, उस्मानखान, अकबर के सामन्त होना मान गये और उन्होंने उसको कर देना भी स्वीकार किया।

सन्धि के भंग होने के बाद, युद्ध अनिवार्य था, उस्मानखान जानता था। इसलिए कई मास से मुगलों से युद्ध करने के लिए वह तैय्यारियाँ कर रहा था।

बनपुर के पास दोनों पक्षों का युद्ध हुआ। पठान युद्ध भूमि में ज्यादह हाथी लाये। मुगल की तोपों की आवाज़ सुन कर हाथी बिदक उठे। उन्होंने महावतों की बात न सुनी और सेना को नष्ट करते इधर उधर भागने लगे। पठानों का हाथी लाना गलती साबित हुई। इस भूल के कारण उनकी सारी चाल चौपट हो गई।

इस विजय पर अकबर बादशाह बड़ा खुश हुआ। क्योंकि बहुत दिनों से उड़ीसा उसकी बगल में छुरे की तरह था। उसने मानसिंह को बंगाल और बिहार के साथ, उड़ीसा का भी सूबेदार नियुक्त किया।

उस्मानखान ने सपने में भी न सोचा था कि परिस्थिति यूँ करवट लेगी, उसकी आशाओं पर पानी फिर गया। युद्ध के आरम्भ होने के कुछ दिन पहिले ही अयाशा अन्तःपुर छोड़कर चली गयी थी। उसके जाने के बाद, उस्मानखान के

लिए सारा संसार अन्धकारमय हो उठा। क्योंकि उसके सारे प्राण उसी पर ही थे। उसके आनन्द का स्रोत वही थी। उसके साथ, उसकी भाग्यश्री ही मानों चली गयी थी।

मानसिंह के अन्तःपुर में अयाशा को पठानों की पराजय के बारे में, बराबर खबरें मिलती रही। दो महीने जब वह वहाँ थी, तो उस्मानखान की हालत बहुत ही गिर गई थी। अयाशा ने सोचा कि उसकी पराजय का कारण, निरुत्साह था और उस निरुत्साह का वह स्वयं कारण थी—क्योंकि वह उसको छोड़कर चली आयी थी। उसने सोचा कि उसका व्यवहार एक कृतघ्न का-सा व्यवहार था। उसकी कृतघ्नता के कारण मुगलों ने सारे उड़ीसा पर ही केवल आक्रमण न किया, बल्कि उस्मान को दिल्ली का सामन्त भी बनना पड़ा। यदि वह जीवित था, तो शायद अयाशा के लिए ही।

पता लगा कि मानसिंह जल्दी ही पटना वापिस आनेवाला था। उसने जिस उद्देश्य से, उसको कैद में रखा था, वह उद्देश्य पूरा हो गया था। उस्मान युद्ध में हार गया था। अयाशा ने सोचा कि शायद मानसिंह अब उसको रिहा कर दे।
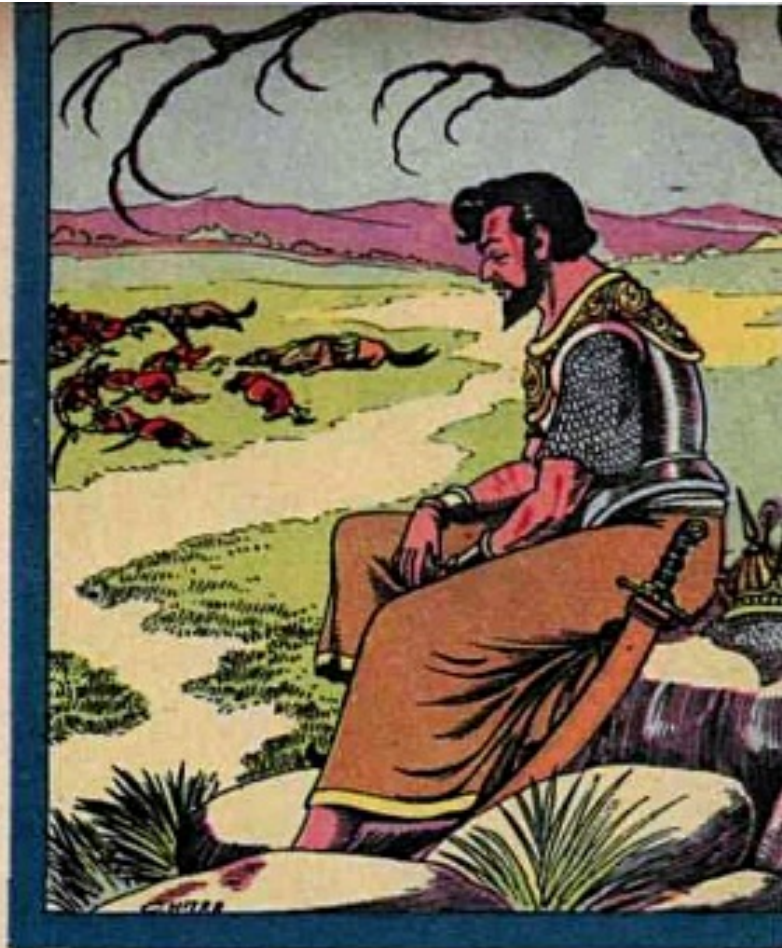
एक दिन तीसरे पहर में अयाशा के पास तिलोत्तमा आयी। वे फिर तभी मिल रही थीं। दोनों ने आलिंगन करके आँसू बहाये।

"मैंने न सोचा था कि तुम्हें फिर देख सकूँगी। मुझे यह जानकर बड़ी खुश हुई कि तुम्हें, तुम्हारे ससुर ने अपना लिया है।" अयाशा ने कहा।

"खुशी क्या है, अभी तो वे कैद में ही हैं।" तिलोत्तमा ने कहा।

तिलोत्तमा को सता रहा था। अयाशा ने फिर उसको न देखने के लिए, अपना मन पक्का कर लिया था। वह यह भी न चाहती थी कि दूसरे यह जाने कि वह जगतसिंह को चाहती थी। वह जगतसिंह को भी इस बारे में नहीं बताना चाहती थी।

तिलोत्तमा ने मन से अयाशा को सलाह दी कि वह भी जगतसिंह से विवाह कर ले, वह उसके साथ अपना प्रेम बँटाने के लिए तैयार थी। परन्तु अयाशा ने उसकी सलाह न मानी। उसने तिलोत्तमा को गला लगाकर, कहा—"हम अब नहीं मिलेंगी। मैं उड़ीसा वापिस जा रही हूँ। यदि पठान मिट गये, तो अयाशा का नाम भी उनके साथ मिट्टी हो जायेगा। मैं नहीं जानती कि यदि मैं मर भी गयी, तो मेरी मौत की खबर तुम तक पहुँचेगी। यह ही हमारा अन्तिम मिलन है।" इसके बाद ऊर्मिला के पास से, तिलोत्तमा के लिए बुलावा आया और वह चली गयी।

"वीर की पत्नियों को, मालूम है कितना धीरज होना चाहिए और तुम इस छोटी-सी बात पर ही धीरज खो बैठी। वे जल्दी ही रिहा कर दिये जायेंगे।"

तिलोत्तमा नहीं जानती थी कि जगतसिंह की रिहाई के लिए कुछ कोशिशें की जा रही थीं और अभिरामस्वामी आवेदन पत्र लेकर दिल्ली गया हुआ था। वे सब बातें अयाशा ने उसको बताईं।

वे दोनों जगतसिंह से प्यार कर रहे थे। परन्तु उन दोनों के प्रेम में बड़ा अन्तर था। जगतसिंह का विरह प्रति क्षण,

मानसिंह वापिस आ गया। अयाशा पर प्रतिबन्ध हटा दिये गये थे। पर वह पूरी तरह स्वतन्त्र न हुई थी। ताज़खान का परिवार उसे देखने आया। उसे पता

लगा कि रास्ते में अभिरामस्वामी का घोड़ा, आवेदन पत्र, धन वगैरह चोरी चले गये थे। उसे बड़ी फ़िक्र हुई।

अयाशा ने उस्मानखान को बड़ी लम्बी चिट्ठी लिखी। उसमें उसने, उसको यकायक छोड़कर आने के लिए माफ़ी माँगी। पछतावा भी दिखाया। यह भी लिखा कि जैसा कि सब सोच रहे थे, वह अपनी सम्पत्ति वम्पत्ति देखने नहीं आयी थी, बल्कि एक और काम पर आयी थी और वह काम भी जल्दी होनेवाला था। उस काम के खतम होते ही वह वापिस आ जायेगी। अयाशा ने यह चिट्ठी ताज़खान के घर एक आदमी के साथ भेजी।

उस दिन रात को काफ़ी समय होने के बाद, मानसिंह और ऊर्मिला ने, अयाशा को बुला भेजा। वह चली भी गयी।

"अब तुम पर कोई प्रतिबन्ध नहीं है। अब तुम क्या करना चाहती हो? कहाँ जाना चाहती हो?" मानसिंह ने पूछा।

"शायद दिल्ली जाऊँ?" अयाशा ने कहा। "वहाँ रह सकती हो? शायद वहाँ तुम्हारे जान पहिचानवाले हैं। अब उड़ीसा में पठानों के पास कुछ नहीं है। तुम उन्हें छोड़ सकती हो।"

"आपके कहने से तो ऐसा लगता है कि मेरा उनको न छोड़ना ही अच्छा मालूम होता है, जब मैं वैभव के समय उनके साथ थी, कैसे उनको कष्ट के समय छोड़कर जाऊँ?"

मानसिंह पर इस बात ने चोट की।

"तुम्हारे लिए कहीं जाने की ज़रूरत नहीं है। तुम हमारी हो और हमारे साथ रहो।" ऊर्मिलादेवी ने कहा।

"माँ, तुम्हें मुझपर प्रेम है, पर मुझे युवराज की रिहाई के लिए दिल्ली जाना होगा।" अयाशा ने कहा।

"उसके लिए आवेदन पत्र जा चुके हैं न!" मानसिंह ने कहा।

"उसे रास्ते में चोर चुरा ले गये हैं। यदि मैं स्वयं गयी, तो शायद काम बन जायेगा।"

"दण्डित की इस प्रकार सहायता करना अपराध है। इसके लिए मैंने एक बार माफ़ कर दिया था, इस बार नहीं माफ़ करूँगा। तुम्हें सज़ा दूँगा।" मानसिंह ने कहा।

"यह बात सच है कि आपको दण्ड देने का अधिकार है, पर आप उस अधिकार का उपयोग नहीं करेंगे।" अयाशा ने कहा।

"क्यों?" मानसिंह ने आश्चर्य से पूछा।

"क्योंकि आप भी युवराज की रिहाई चाहते हैं। अपनी प्रतिष्ठा को बढ़ाने के लिए, आपने अपने पुत्र को स्वयं दण्ड दिया। पर आप नहीं चाहते कि वे दण्ड का अनुभव करो। आप बहुत दिनों से चिन्तित हैं कि कैसे यह दण्ड रद्द कर दिया जाय।"

"क्या इसमें तुम्हारा स्वार्थ नहीं है?"

"दोनों का ही स्वार्थ है, उस हालत में मुझे दण्ड देकर आप क्या सन्तोष पायेंगे।"

"इस बीच ऊर्मिला ने कहा—"कुछ भी हो, मैं तुम्हें अपनी बहू बनाये बगैर नहीं रहूँगी।"

"माँ, मैं इतनी किस्मतवाली नहीं हूँ। मेरा भविष्य तो पहिले ही निर्णीत हो चुका है।" अयाशा ने कहा। [अभी और है]

हिस्सेदार

विक्रमार्क ने अपना हठ न छोड़ा। वह फिर पेड़ के पास गया। पेड़ पर से शव उतार कर, कन्धे पर डाल हमेशा की तरह श्मशान की ओर चलने लगा। तब शव में स्थित बेताल ने कहा—"राजा, मुझे नहीं मालूम कि तुम अपनी मेहनत का फल पा सकोगे कि नहीं, या भैरव की तरह उसे खो बैठोगे? ताकि तुम्हें थकान न मालूम हो, मैं भैरव की कहानी सुनाता हूँ। सुनो।" उसने इस प्रकार कहानी सुनानी शुरु की।

भैरव एक छोटे-से गाँव में पैदा हुआ। छोटी उम्र में ही उसका पिता गुज़र गया था। वे बहुत गरीब न थे। मेहनत करने से ज़िन्दगी आराम से गुज़र जाती थी। उसकी माँ ने ही भैरव को बड़ा किया। जब वह पढ़ लिख गया, तो उसने अपने

वेताल कथाएँ

छोटे गाँव में कष्ट उठाते रहने की अपेक्षा, बाहर जाकर थोड़ी पूँजी से कोई व्यापार करके, स्वयं सुखी और अपनी माता को सुखी बनाने की ठानी। इसलिए वह पूँजी कमाने के लिए शहर के लिए निकल पड़ा। खर्च के लिए अपनी माँ के कुछ गहने साथ ले लिये।

कुछ दूर जाने के बाद, एक गाँव के बाहर भैरव को एक हृदय द्रावक दृश्य दिखाई दिया। एक युवक एक स्त्री के शव के सामने बैठकर लगातार आँसू बहा रहा था, भैरव ने उस युवक के पास जाकर पूछा—"कौन हो भाई तुम? और यह लाश किसकी है? और इस निर्जन प्रदेश में बैठकर क्यों रो रहे हो?"

"मैं एक अभागा हूँ। और यह मेरी पत्नी है। मेरे पिता मशहूर सामुद्रिक व्यापारी थे। उसके साथ तीन जहाज़, जिनमें माल भरा था समुद्र में डूब गये और मेरे लिए सिवाय व्यापार के कर्ज के कुछ न बचा। जब मैंने अपनी सारी सम्पत्ति बेची, तो भी वह कर्ज न चुका सका। अपमानित होकर हम नगर में न रह सके पास के गाँव में हमने अज्ञातवास किया। कल रात को मेरी पत्नी भी गुज़र गई। मैं गाँववालों से कुछ न माँग सका। शव को उठाकर यहाँ चला आया। मेरे पास इतना रुपया भी नहीं है कि इस शव का दहन संस्कार कर दूँ।" कहकर वह युवक जोर से रोने लगा।

"घबराओ मत। मैं गाँव में जाकर इसके दहन संस्कार की व्यवस्था करूँगा।" भैरव ने कहा।

"माफ़ करो। मैं आपसे दान नहीं ले सकता, ऋण नहीं ले सकता। मैं भी यहीं प्राण छोड़ दूँगा। तब जंगली जानवर

हमें खा लेंगे। हम दोनों के प्रेतों को मिलाकर कोई आता जाता संस्कार भी कर देगा। आप जाइये।" युवक ने कहा।

भैरव ने उससे कहा—"मैं तुम्हें दान नहीं दे रहा हूँ। न ऋण ही दे रहा हूँ। मैं व्यापार करने निकला हूँ। मेरे पास थोड़ा-सा रुपया है। वह मैं तुम्हारे लिए खर्च दूँगा। तुम मेरे साथ व्यापार में साझेदार बनो। आय आधा आधा बाँट लेंगे। यदि तुम साथ हिस्सेदार होने के लिए तैयार हो, तो मेरा रुपया लो।"

"यदि तुम्हारे पैसे से मैंने पत्नी का दहन संस्कार कर दिया, तो हमारे पास पूँजी कहाँ बचेगी? मेरे पास कानी कौड़ी भी नहीं है।" युवक ने कहा।

"मेरे पास माँ के गहने हैं। मुझ जैसे के लिए, जो व्यापार का गुर नहीं जानता यह रुपया नाकाफी हो सकता है, पर चूँकि तुम उसे जानते हो, इसलिए कोई छोटा मोटा व्यापार शुरु किया जा सकता है।" भैरव ने कहा और उसके लिए वह युवक मान भी गया।

भैरव गाँव गया। उसने कुछ ब्राह्मण शव वाहकों को मनाया। शव के दहन के लिए

लकड़ियाँ जमा करवाईं। समीप ही तालाब के पास के श्मशान में लाश की दहन क्रिया की। भैरव को यह भी मालूम हो गया कि युवक का नाम कुमारगुप्त था।

दहन संस्कार के पूरा होते होते घना अन्धकार छा गया। भैरव और कुमारगुप्त ने तालाब में स्नान किया और उसके किनारे ही सो गये। सवेरे के समय भैरव को एक सपना आया। उसमें कुमारगुप्त की पत्नी ने कहा—"आपने मेरे पति को नया जीवन दिया है। उसकी कृतज्ञता में मैं आपको एक रहस्य बताती हूँ। यदि

मेरी राख अन्धों की आँखों में लगाई, तो वे फिर देखने लगेंगे।" यह कहकर, वह अदृश्य हो गयी। तुरत वह उठा।

भैरव को उस स्वप्न पर आश्चर्य हुआ। उसे, उस स्वप्न पर विश्वास न हुआ। परन्तु कुमारगुप्त की पत्नी ने स्वप्न में जो बातें कही थीं, वे अब भी उसके कानों में गूँज रही थीं। फिर भी वह कुमारगुप्त के उठने से पहिले श्मशान गया, चिता से कुछ राख लाकर, उसने पोटली बाँध ली।

सवेरे होते ही नित्य कृत्य से दोनों निवृत्त हुए और दुपहर तक वे नगर में जा पहुँचे। वहाँ एक सराय में वे ठहरे, सराय के बाहर उनको एक अन्धा भिखारी दिखाई दिया। भैरव ने पोटली में से चुटकी-भर राख निकालकर उसकी आँखों पर लगाई। तुरत उसे दीखने लगा। वह गंडानी न देख सका, आँखें मलते हुए, वह चिल्लाया—"मैं देख सकता हूँ। मैं देख सकता हूँ।"

यह बात सारे शहर में जल्दी ही फैल गयी। दूर दूर से अन्धे आकर, भैरव के पास चिकित्सा करवाने लगे। इतने में राजा के यहाँ से भैरव को बुलावा आया। वहाँ के राजा की आँखें, कुछ दिन पूर्व यकायक अन्धी हो गयी थीं। कई वैद्यों ने कई तरह की चिकित्सा की, पर उसको तब भी दृष्टि न मिल सकी। यह जानकर कि कोई परदेशी अन्धापन दूर कर रहा था, राजा ने उसको अपने आदमी भेजकर बुलवाया। भैरव, कुमारगुप्त को सराय में रहने के लिए कहकर, उन आदमियों के साथ राजमहल गया।

राजवैद्यों ने भैरव से कई प्रश्न किये। उसने किससे वैद्यक सीखी थी? उसके भस्म में क्या क्या चीज़ें थीं? भस्म के कितने पुट बने थे?

"मैं वैद्य नहीं हूँ। मैं जिस भस्म का उपयोग कर रहा हूँ वह किसी वैद्य को नहीं मिल सकती। जब तक उससे दृष्टि मिलती रहेगी, तब तक मैं उसका उपयोग करता रहूँगा।" भैरव ने कहा। राजा की आँखों पर भस्म लगाते ही राजा को दृष्टि मिल गयी।

"महाराज, अब मुझे आज्ञा दीजिये।" भैरव ने कहा।

"तुमने मेरा इतना उपकार किया है, क्या मैं उसका बिना प्रत्युपकार किये, तुम्हें भेज दूँगा?" कहकर, राजा ने भैरव को गौर से देखा। युवक सुन्दर था। राजा ने उससे कहा—"बेटा, जब मैंने देखा कि बहुत चिकित्सा करने पर भी मेरी आँखें ठीक नहीं हो रही हैं, तो मैंने सोचा कि जो कोई मेरी दृष्टि मुझे दे देगा उसके साथ मैं अपनी लड़की का विवाह कर दूँगा और आधा राज्य भी दे दूँगा। इसलिए तुम मेरी लड़की के साथ विवाह करो और अपना पट्टाभिषेक करवाओ।"

"क्षमा कीजिये। मैं इस चिकित्सा के लिए यह प्रत्युपकार नहीं पा सकता।

मुझे जाने दीजिये।" कहकर, भैरव वापिस चला आया। कुमारगुप्त को साथ लेकर, एक और नगर गया। वह अपनी माँ के गहने बेचकर, पूँजी पाकर व्यापार करने लगा। कुमारगुप्त के कारण, व्यापार खूब चल भी पड़ा। दोनों थोड़े ही समय में बहुत धनी भी हो गये।

बेताल ने यह कहानी सुनाकर कहा— "राजा, मुझे एक सन्देह है, भैरव ने राजकुमारी से क्यों नहीं विवाह करके राज्य पाया? क्या वह राज्य करने से डरता था या उसे विवाह से डर था? उसने राजा से कम से कम व्यापार के लिए क्यों न पूँजी माँगी? यदि तुमने इन सन्देहों का जान बूझकर उत्तर न दिया, तो तुम्हारे सिर के टुकड़े टुकड़े हो जायेंगे।"

इस पर विक्रमार्क ने कहा—"भैरव और कुमारगुप्त हिस्सेदार थे। वे अपनी आय आधा आधा बाँटने के लिए मान गये थे। चिता की भस्म भी उन दोनों की थी, भैरव की मात्र न थी। उसके उपयोग से वह राजा को दृष्टि दे सका था, उस हालत में उस पत्नी और राज्य को कैसे ले, जिसका वह आधा हिस्सा नहीं दे सकता था? उसको अस्वीकार करने के बाद, राजा का पैसा लेना उसे अनुचित लगा। उसे लगा कि राजकुमारी से और आधे राज्य से, उसे अपने पैसे का मूल्य ही अधिक था। इसलिए भैरव ने राजा से कुछ भी न लिया।

राजा का इस प्रकार मौन भंग होते ही बेताल शव के साथ अदृश्य हो गया और पेड़ पर जा बैठा। (कल्पित)

स्वप्न में सत्य

एक देश में कलिन्दक नाम का आदमी था। उसकी पत्नी का नाम करालकन्ठी था और वह बड़ी चुड़ैल थी। करालकन्ठी को सोने के लिए पागलपन-सा था, वह हमेशा पति को सोना लाने के लिए सताती रहती। वह पत्नी के सताने के कारण इतना तंग आ गया कि उसने आत्महत्या करने की ठानी, वह जंगल गया। एक पेड़ की टहनी से उसने रस्सी बाँधी और उसके सिरे पर एक फन्दा बना लिया। फन्दे में उसने अपना सिर दे भी दिया।

पर कलिन्दक मरा नहीं चूँकि टहनी टूट गई थी, इसलिए उसके सिर का फन्दा कसा नहीं। वृक्ष पर एक यक्ष बैठा बैठा यह सब देख रहा था। वह प्रत्यक्ष हुआ और उसने कलिन्दक से पूछा कि वह क्यों जीवन से विरक्त हो गया था। कारण जानकर उसने उससे यूँ कहा—"ये तीन दाने लेकर घर जाओ। रोज सोने से पहिले एक दाना जल्दी से निगल जाओ। इनकी महिमा से तुम्हें सोना मिलेगा।" वह तीन दाने कलिन्दक के हाथ में रखकर अदृश्य हो गया।

कलिन्द उन दानों को घर ले गया। उस दिन रात को सोने से पहिले उसने एक दाना खाया। तुरत उसे अच्छी नीन्द आ गई। नीन्द में उसे एक अपूर्व सपना दिखाई दिया। उसमें वह घर से निकल पड़ा और ऐसी जगह में से जो उसने कभी न देखी थी एक जलाशय के पास गया, जलाशय के सिरे पर उसने एक अप्सरा को किसी की प्रतीक्षा में बैठा देखा। जलाशय में एक ही एक सोने का कमल

चमक रहा था, कमल की ओर उसे देखता देख वह स्त्री हँसी, उसे तोड़कर उसने उसे दे दिया और कहा—"बिना पीछे मुड़े देखे, घर चले जाओ।"

सवेरे जब वह उठा, तो कमल की आकृति में सोना उसके हाथ में था। उसने यह सोचकर कि उसका सपना साकार हो गया था, वह सोना अपनी पत्नी को दे दिया और स्वप्न के बारे में भी बता दिया। पति ने इतना सोना दिया था, उसका उसकी प्रशंसा करना तो अलग, उसने पूछा—"उस तालाब में से तुम एक ही फूल लाये, क्यों नहीं और ज्यादह लाये?" उसने पति को खूब पीटा।

अगले दिन रात को सोते समय कलिन्दक ने एक और दाना निगला। तुरत उसकी सारी शारीरिक बाधायें खतम हो गईं और वह बड़े आराम से सो गया, फिर उसे वही जलाशय दिखाई दिया। उसमें एक सोने का कमल था। फिर वही अप्सरा दिखाई दी, इस बार भी उस स्त्री ने उसको सोने का कमल तोड़कर दिया और उसे भेज दिया।

अपने पति को फिर एक ही कमल लाया देखकर, करालकन्ठी ने उसको

गली में ढकेल दिया, शोर किया। दस आदमी जमा हुए। राजा तक शिकायत पहुँची। राजा ने पति-पत्नी को बुलाकर पूछा—"तुम क्यों गली में लड़ झगड़ रहे हो?"

कलिन्दक ने, जो कुछ जैसा गुज़रा था, उसी तरह सुना दिया। राजा कीर्ति प्रताप को वह सुन विश्वास न हुआ। उसने कलिन्द और उसकी पत्नी को राजमहल में ही रहने के लिए कहा। उस दिन रात को जब राजा सोने लगा, तो वह कलिन्द का तीसरा दावा निगल गया।

राजा भी सपने में जलाशय पहुँचा। पर उसने जलाशय की ओर न देखा, किनारे बैठी अप्सरा पर ही उसकी दृष्टि गड़ी रही। राजा उस पर मुग्ध हो गया और उसको पकड़कर ले गया। "ज़रा ठहरो, मैं स्वतन्त्र नहीं हूँ। उस जलाशय की ओर ही देखो।"

राजा ने जब जलाशय की ओर देखा, तो वह खून से भरा हुआ था। उसमें सर्प विष ज्वालायें उगल रहे थे। बहुत भयंकर दृश्य था।

"राजा, मेरा नाम राज्य रमा है। जिनकी दृष्टि मुझ पर नहीं होती, उनको

वे साँप, एक कमल के आकार में दिखाई देते हैं। वह सिरोंवाला राक्षस भुजंग है, वह मुझे यहाँ से जाने नहीं देगा। यदि मुझे किसी ने छुआ, तो छूनेवाले और मुझ पर आपत्ति आयेगी। जब तक वह नष्ट नहीं हो जाता, तब तक मैं तुम्हें नहीं मिल सकती।" उस स्त्री ने कहा।

कीर्ति प्रताप ने झट म्यान में से तलवार निकाली।

"राजा, जल्दबाज़ी न करो। वह किसी से, किसी भी शस्त्र से नहीं मारा जा सकता, वह एक ही प्रकार मर सकता है। यदि वह व्यक्ति, जो मुझ से प्रेम कर रहा था, अपने हृदय का रक्त उस पर छिड़के, तो वह मर जायेगा।" राज्य रमा ने कहा।

"यदि यही बात है, तो मेरे हृदय का रक्त उसके सिरों पर छिड़को।" कहते हुए कीर्ति प्रताप ने अपनी तलवार से अपना हृदय काट दिया और नीचे गिर गया।

जब उसे होश आया, तो प्रभात वाद्य सुनायी दिये। उसने जब आँखें खोलीं, तो बगल में राज्य रमा को, चामर चलाते देखा। उसके पलंग के चारों ओर कमल चमचमा रहे थे।

"क्या यह स्वप्न है? या सत्य?" राजा ने पूछा।

"स्वप्न में सत्य।" राज्य रमा ने कहा। इसके बाद, कीर्ति प्रताप राज्य रमा के साथ सुख सन्तोष के साथ रहा। सोने के कमलों के कारण, उसने अपनी प्रजा को कोई कमी न होने दी।

करालकन्ठी ने भी अपना चुड़ैलपन छोड़ दिया और अपने पति कलिन्दक के साथ सुख से जीवन बिताने लगी।

ज्योतिष

एक गाँव में श्रीराम नाम का एक गरीब किसान रहा करता था। वह निरा बेअक्ल था। कोई भी काम ठीक तरह न कर पाता था। जब तक वह बड़ा न हो गया उसके माँ बाप उसको "बावला, अभागा" कहकर डाँटते फटकारते रहे। शादी के बाद, उसको ये बातें पत्नी से भी सुननी पड़ीं। गरीबी तो थी ही, वह पत्नी की ये बातें भी न सह सका। वह घर छोड़कर चला गया।

गाँव के बाहर उसे एक पेड़ के नीचे एक तोता ज्योतिषी दिखाई दिया। मालिक के पिंजड़ा खोलते ही, एक तोता बाहर निकलता और बाहर कतार में रखे, चिटों में से एक को निकालकर मालिक के हाथ में दे देता। उसे तोता का मालिक पढ़कर सुनाता। उसको लोगों ने घेर रखा था, उसे दो तीन आने देकर, वे उससे ज्योतिष पढ़वा रहे थे। यह देख श्रीराम ने भी ज्योतिषी के हाथ में दो आने रखे और उससे ज्योतिष पढ़ने के लिए कहा। तोते ने एक चिट निकालकर दी, ज्योतिषी ने उसे लेकर यूँ पढ़ा।

"भगवान ने तुम्हें आँखें खोलकर देख लिया है। आज से तुम्हारे भाग्य खिल गये हैं। भाग्य खिल उठा है, तभी तो तुम ये बातें सुन रहे हो।"

बेअक्ल श्रीराम को ये बातें समझ में न आयीं। उसने पूछा—"ठीक है कि भाग्य खिल उठा है, पर उसके लिए मुझे क्या करना होगा?" श्रीराम तो बस यही

जानता था कि जो दुवन्नी उसके पास थी, वह उसे भी खो बैठा था।

"कुछ भी करो तुम्हें कोई अड़चन न होगी, चाहे तुम किसी का मुँह तोड़ दो, या कमर तोड़ दो, या किसी के बाल पकड़कर खींचो, तुम्हारा कोई नुक्सान न होगा। अच्छा ही होगा। तुम्हारा कल्याण ही होगा। इतनी दूर क्यों, यदि तुमने अपने सामने के जुड़वे कलश को ही लात मारी, तो भी तुम्हारा लाभ होगा। मेरा तोता ज्योतिष कभी झूट नहीं निकलता। इसका कोई जवाब नहीं है।" तोता ज्योतिषी ने कहा।

ये बातें श्रीराम को समझ में आ गईं। वह कुछ दूर जाकर, एक तालाब के बन्द के पास पहुँचा। बन्द पर पिता और लड़के बैठे थे। पिता दान्त के दर्द के कारण "बा....बा" कराह रहा था।

श्रीराम ने उसको देखते ही, मुट्ठी कसी और उसके मुख पर मुक्का मारा। जब एक अनजाने को यूँ अपने पिता को मारता देखा, तो लड़के को गुस्सा आ गया। जब पिता के मुख से खून निकलने लगा, तो वह श्रीराम पर झपटा। "दुष्ट कहीं का, मेरे पिता को मारते हो?" उसने उसका गला पकड़ लिया।

"भाग्य को साथ आना चाहिये।" श्रीराम चिल्लाया।

पिता ने लड़के को रोकते हुए कहा—"उस आदमी को कुछ न कहो। चोट के कारण, मेरे दोनों हिलनेवाले दान्त गिर गये हैं। दर्द चला गया है। इस आदमी ने हमारा बड़ा उपकार किया है।" यह सुनकर लड़के ने श्रीराम को छोड़ दिया।

"अरे भाई, तुम तो भगवान की तरह आये। यह लो रुपये।" उस आदमी ने

जिसके दान्त टूट गये थे श्रीराम के हाथ में दो रुपये रखे।

श्रीराम को तोते के ज्योतिष पर विश्वास हो गया। वह आगे बढ़ा। कुछ दूर जाने के बाद, उसको एक आदमी विचित्र भंगिमा में दिखाई दिया। वह कमर की दर्द के कारण, बड़ा कष्ट उठा रहा था। उस आदमी का मुँह परली तरफ़ मुड़ा हुआ था। श्रीराम पीछे से उसके पास आया। तोते के ज्योतिष के अनुसार उसने पैर लम्बा करके उसको मारा। चोट लगते ही, वह आदमी उछला—

"कौन हो तुम?" कहता वह श्रीराम की ओर लपका।

श्रीराम डरा। वह जोर से चिल्लाया— "भाग्य को साथ आना चाहिये।" उस आदमी के मुँह पर, जिसने उसे मारने के लिए हाथ उठाया था, क्रोध की अपेक्षा आश्चर्य आ गया। उसे लगा कि उसकी कमर की दर्द चली गई थी।

"अरे भाई, कमर की दर्द के कारण मेरी बुरी हालत हुई हुई थी। किसी दवा दारु से यह न गयी। तुम्हारी लात ने ठीक कर दिया। देखो, अब मैं सीधा
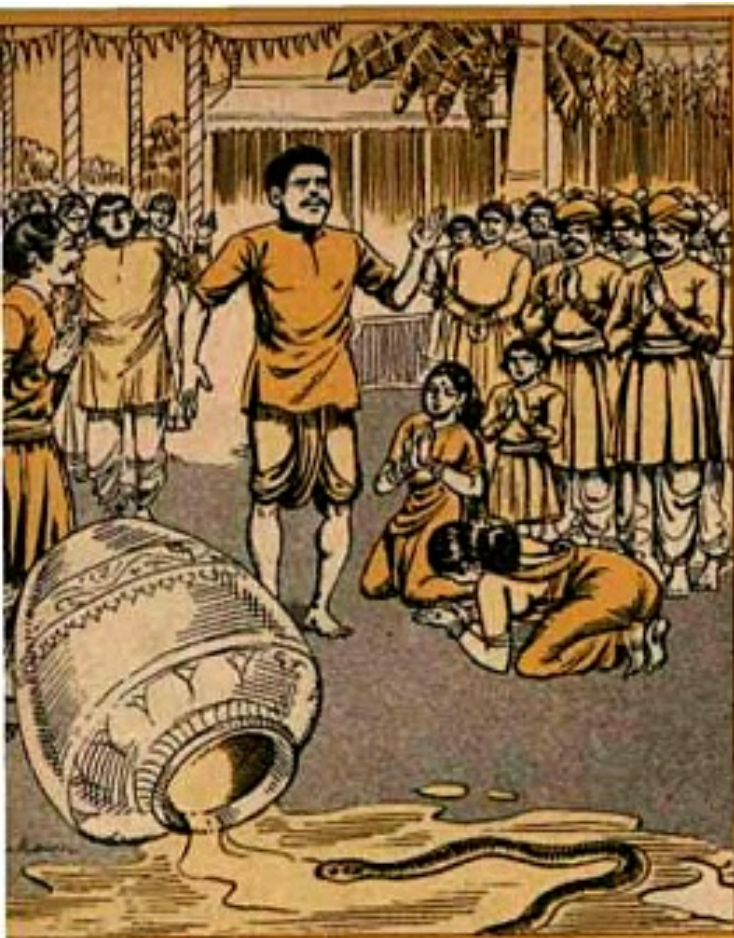
खड़ा हो लेता हूँ। सचमुच तुम्हें भगवान ने भेजा है। यह लो दस रुपये, रखो।" उस आदमी ने श्रीराम को रुपया दिया।

श्रीराम और उत्साह से आगे बढ़ा। एक घर में विवाह हो रहा था। घर के बाहर एक छोटे से पन्डाल में शहनाइयाँ बज रही थीं। श्रीराम उनके पास गया और एक शहनाई बजानेवाले के बाल पकड़कर उसे खींचा। यह देख, दूसरा शहनाई बजानेवाला, ढ़ोल बजानेवाला और ताल बजानेवाला श्रीराम को पागल समझकर शहनाई बजानेवाले की रक्षा के लिए बाहर आये—वे बाहर आये ही थे कि पन्डाल ढ़ह गया।

सब ज़मा हो गये। जो कुछ गुज़रा था, वह देखकर लोगों ने श्रीराम को पुण्यात्मा बताया। उसकी प्रशंसा की। शादीवालों ने श्रीराम को बीस रुपये दिये और उससे कहा कि वह शादी होने तक वहीं रहे। श्रीराम ने सोचा कि तोता ज्योतिष ठीक निकल रहा था।

शादी में किसी संस्कार के लिए गुड़ के पानी से भरे कलश लाये गये। श्रीराम ने अन्दर जाते जाते उन चान्दी के कलशों को देखा। उसे याद आया कि तोता ज्योतिषी ने किसी कलश को मारने के लिए भी कहा था। उसने कलश को लात मारी, कलश उलटा और लुढ़का। सारा गुड़ का पानी नीचे जा गिरा।

जिस किसी ने यह देखा, उसे श्रीराम पर गुस्सा आया। सब ने उसे बुरी तरह डाँटा फटकारा। देख क्या रहे हो? क्यों नहीं इसको लातें मारते?" कई गुस्से में चिल्लाये।

"भाग्य को साथ आना चाहिये।" श्रीराम ने कहा।

इतने में कोई आया और उसने उल्टे कलश को उठाकर कहा—"अरे, साँप साँप...." वह ज़िन्दा साँप न था। मर चुका था। वह गुड़ के पानी में ही रहा होगा।

तब वहाँ कोई ऐसा न था, जिसने श्रीराम की प्रशंसा न की हो। सब यह कहने लगे कि शिव ही उस रूप में आया था, बड़े, छोटे, सभी ने उसके सामने साष्टान्ग किया। वर बधु पक्ष ने उसको कपड़े दिये, सोना दिया। पार्वती देवी, यानि, उसकी पत्नी के लिए भी कपड़े दिये। उसके बहुत मना करने पर भी, उन्होंने उसके लिए पालकी मँगायी और उसमें उसे घर भेज दिया।

जब उसकी पत्नी ने उसको, राजा की तरह आता देखा, तो उसे बड़ा आश्चर्य हुआ। उसके लिए जरी साड़ी, रेशमी साड़ी, सोना आदि, जो वह लाया था, वह देख और भी खुश हुई और उससे पूछा कि कैसे उसने उन्हें कमाया था।

श्रीराम ने जो कुछ गुज़रा था, वह अपनी पत्नी को सुनाया। "उन शादीवालों ने मुझे जबर्दस्ती घर भेज दिया; नहीं तो मैं अभी न आता, न मालूम मैं कितनों

के मुख तोड़ता, कमर तोड़ता, बाल खींचता, कलशों को लात मारता।"

श्रीराम की पत्नी जान गयी, भले ही भाग्य साथ आया हो, पर उसको अक्ल न आयी थी। "जो कुछ भाग्य ने साथ दिया है, वह काफ़ी है। अब घर में ही रहा करो।"

परन्तु श्रीराम का तोता ज्योतिष में विश्वास बिल्कुल भी कम न हुआ। इसलिए वह पत्नी से बिना कहे, फिर एक बार घर से निकल पड़ा। शाम के समय, वह एक गाँव में पहुँचा। उस दिन रात को, एक सराय में एक स्वामी, अपने भक्तों को उपदेश दे रहा था। श्रीराम जब वहाँ पहुँचा, तो उसने उस स्वामी का मुख तोड़ना चाहा। उसने उसके मुँह पर ज़ोर से मुक्का मारा। स्वामी के मुख से खून निकलने लगा। आसपास बैठे हुए लोगों ने उसको खूब मारा। "भाग्य को साथ आना चाहिए।" श्रीराम कई बार चिल्लाया, पर कोई फायदा न हुआ।

"वह मूर्ख है, क्यों उसे तंग करते हो? छोड़ दो।" यदि स्वामी उस दिन अपने भक्तों को न कहता, तो श्रीराम ज़िन्दा न बचता। आँखें अन्दर फँस गयी थीं, सारा शरीर लहू लुहान था। गिरता पड़ता, वह घर पहुँचा और जो कुछ गुज़रा था, उसने अपनी पत्नी को बताया।

"मैंने कहा था कि न जाओ, पर तुमने क्या सुनी? क्या भाग्य हमेशा साथ देता है? जो भाग्य मिला है, उसकी रक्षा करनी चाहिए।" श्रीराम की पत्नी ने कहा।

उसके बाद, पत्नी की बात सुनता श्रीराम आराम से रहने लगा।

समुद्र रानी के गुलाम

[२]

अगले दिन जब राजकुमार वन रानी के पास जा रहा था, तो राजकुमारी आयी। "खुश खबरी, मैं विवाह के लिए आवश्यक सामग्री लेने वन रानी के पास जा रहा हूँ।" उसने कहा।

"तुम यह कहोगे, यह डरकर मैं तुम्हें खोजती आयी हूँ। जानती हो, वह वन रानी कैसी है? इस समुद्र रानी से ज्यादह पढ़ी लिखी है। यदि तुम उसके पास जाकर जीते जी वापिस आ सके, तो तुम बहुत भाग्यशाली हो। जो मैं बताऊँ उसे ज़रा ध्यान से सुनो। इसमें से तुम कुछ भी भूल गये, तो हम दोनों एक दूसरे को न देख सकेंगे। मैं तुम्हें दो चाकू, दो कुल्हाड़ियाँ, दो रोटियाँ दूँगा। वन रानी के रास्ते में जिस जिसको वह देनी हो, दे देना। यह तकिया, वन रानी के पाल्तू साँप को देना। वह साँप वन रानी के घर के बरान्डे में, ज़मीन पर सिकुड़कर पड़ा रहता है। वहीं रंग बिरंगी कुर्सियाँ हैं। यदि लाल कुर्सी पर बैठे, तो लाल लाल लपटें निकलेंगी और तुम्हें राख कर देंगी। यदि तुम सफेद कुर्सी पर बैठे, तो नदी का प्रवाह आयेगा और तुम्हें बहा ले जायेगा। नीली कुर्सी पर बैठे, तो तुम्हारी नसें फूल जायेंगी और तुम मर जाओगे। पीली कुर्सी पर बैठे, तो तुम्हारा खून बिगड़ जायेगा और तुम पीलिये रोग से मर जाओगे। पर उस बरान्डे में ही एक कोने में एक काली कुर्सी है, तुम उस पर बैठ

सकते हो। कोई खतरा नहीं है। एक और बात, वन रानी, जो भी कुछ खाने को दे, तुम न खाना। अगर गलती से खा लिया, तो तुम्हारे प्राण नहीं बचेंगे। मेरी बतायी इन बातों का पूरी तरह ख्याल रखना।" राजकुमारी ने कहा।

"याद करने के लिए बहुत-सी बातें हैं, फिर भी कोशिश करूँगा।" कहकर, राजकुमार वन रानी के पास जाने के लिए निकल पड़ा। वह समुद्र के मार्ग से तट पर पहुँचा और वहाँ से जंगल में चलने लगा। जब वह कुछ दूर गया, तो उसने दो व्यक्तियों को लकड़ी काटते देखा। क्योंकि वे काटने के लिए लकड़ी के चाकुओं का इस्तेमाल कर रहे थे, इसलिए वे अपनी मेहनत का पूरा फल नहीं पा रहे थे, क्योंकि राजकुमारी के दिये हुए चाकू उनके काम आ सकते थे, इसलिए उसने उनको दे दिये। उन चाकुओं से लकड़ी छीलना आसान हो गया और वे खुश हुए।

थोड़ी दूर और जाने के बाद, दो लकड़हारे एक लकड़ को काटने की बड़ी कोशिश कर रहे थे। राजकुमार ने उनको लोहे ही कुल्हाड़ी दी। उससे लकड़ को आसानी से कटता देख, वे भी बड़े खुश हुए।

कुछ दूर जाने के बाद, जंगल में एक घर दिखाई दिया। उस घर के पहरा देनेवाले भालू और भेड़िया, उसकी ओर लपके। उसने एक रोटी के दो टुकड़े किये और दोनों को एक एक टुकड़ा दे दिया। वे उस रोटी को मुख में पकड़कर चले गये। इसके बाद, वह वन रानी के घर में बड़ी दिलेरी से घुसा।

अन्दर सिंहासन पर बैठी वन रानी ने, उसके काम के बारे में सुनकर पूछा—

"क्या हमारी बहिन ने भेजा है? बहुत दूर से आये हो। थक गये हो। आराम से बैठो।" उसने रंगीन कुर्सियाँ दिखाईं। वह उन पर न बैठकर, कोने में रखी काली कुर्सी पर बैठ गया।

वन रानी का मुँह फीका पड़ गया। "मैं तुम्हारे लिए कुछ खाने को लाती हूँ।" कहती, वह अन्दर गयी। उस समय उसने देख लिया कि साँप कहाँ लेटा हुआ था, वह उसके पास गया। उसने फण उठाकर फुँकारा। उसने उसके सिर के नीचे तकिया रख दिया। तुरत साँप तकिये पर सिर रखकर सो गया।

इतने में वन रानी ने तश्तरी में लड्डू उसके सामने रखा। "तुम खाते रहो। इस बीच जो चीज़ें तुम्हें चाहिए, मैं उन्हें तैयारी करती हूँ।" अन्दर जाते जाते, उसने साँप से कहा—"साँप साँप, ज़रा अतिथि की अच्छी खातिरदारी करो।"

उसके अन्दर जाते ही राजकुमार ने लड्डू लेकर, जेब में डाल लिया।

कुछ देर में वन रानी ने सामान का गठ्ठर लाते हुए पूछा—"साँप साँप, अतिथि की अच्छी खातिरदारी की कि नहीं?" साँप ने कोई जवाब न दिया। उसे छोटे से तकिये पर सिर रखकर सोता देख, उसका मुँह सिकुड़-सा गया। पर जब उसने राजकुमार के सामने खाली तश्तरी देखी, तो उसका मुँह खिल-सा गया।

"लड्डू अच्छा था न? यह लो, अपने विवाह की चीज़ें। इतमीनान से जाओ, बेटा।" उसने कहा।

वह घर का दरवाज़ा पार करके, आँगन में आया ही था कि उसके जेब का लड्डू बड़ा होता गया। कद्दू जितना हो गया। आखिर वह फूट पड़ा। अगर वह उसे

वन रानी फिर चिल्लायी—"अरे, पेड़ काटनेवालो, पास आनेवाले को काट गिराओ।" पेड़ काटनेवालों ने सिर उठाकर देखा। उन्होंने पहिचान लिया कि वह लड़का वही था, जिसने उनको लोहे की कुल्हाड़ी दी थी और उन्होंने उसको जाने दिया।

वन रानी और ज़ोर से चिल्लायी—"अरे लकड़ी छीलनेवालो, आनेवाले को खरोंच खरोंचकर मार दो।"

उन्होंने जो सिर उठाकर देखा, तो वहाँ वही लड़का था जिसने उन्हें चाकू दिये थे। उसने उनको जाने दिये।
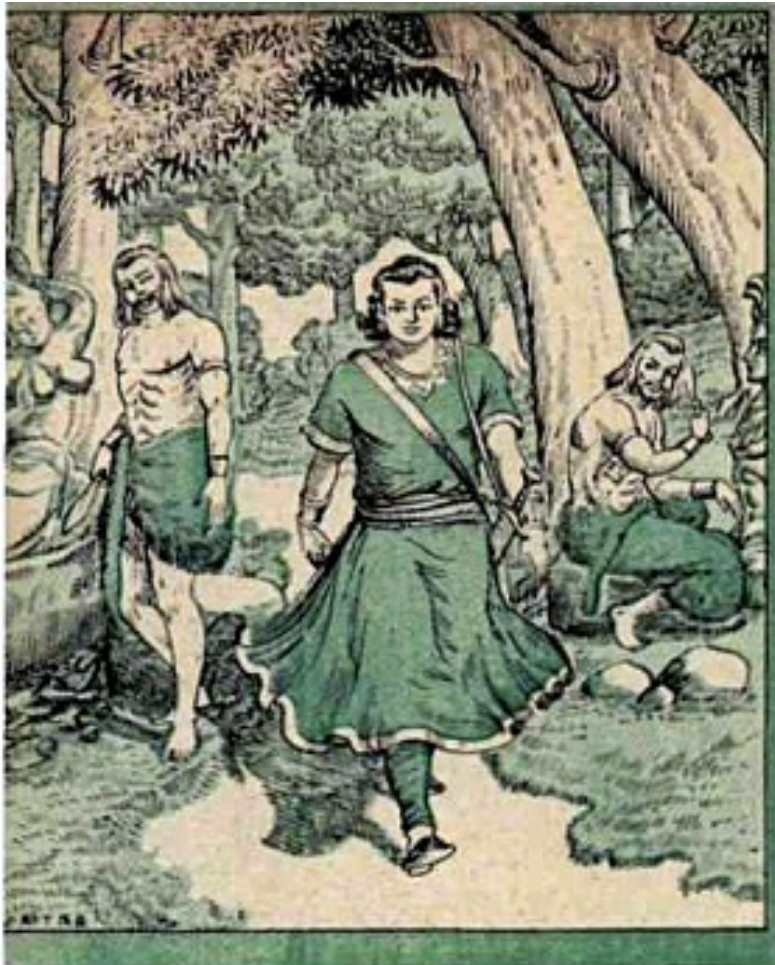
खा लेता, तो उसकी हालत क्या होती, यह वह जान गया।

परन्तु तब वन रानी भी जान गयी कि लड़का बचकर भागा भागा जा रहा था। वह चिल्लायी—"रे भेड़िये, रे भालू, उसे पकड़ लो।"

भेड़िया और भालू मुख खोले खोले उसकी ओर आये। उसने दूसरी रोटी के दो टुकड़े किये और दोनों को एक एक दे दिया। वे अपनी जगह चले गये और रोटी खाने में लग गये। राजकुमार आगे बढ़ गया।

उसको अपनी बहिन के पास से भी सुरक्षित वापिस आया देख, समुद्र रानी तम तमा उठी। उसने फिर भी अपने को सम्भालकर पूछा—"तुम सही सलामत वापिस आ गये हो। सचमुच तुम बड़े अक़्लमन्द हो। आओ, तुम्हारे विवाह की तैय्यारियाँ धूमधाम से करें।"

राजकुमार यह सुनकर फूला न समाया। परन्तु राजकुमारी ने उस दिन रात को उसके पास आकर कहा—"रानी, बड़ी खौल रही है। आज अगर हम बंचकर न भाग गये, तो हम ज़िन्दा न बचेंगे।"

"क्या वह आसान काम है!" उसने पूछा।

"आसान न भी हो, तो भी करना ही होगा। तुम अस्तबल में जाओ। वहाँ एक काले घोड़े पर सोने की ज़ीन, घोड़ी पर चान्दी की ज़ीन लगाकर रखो। रात को जब समुद्र रानी सो जायेगी, तब हम भाग निकलेंगे। इस बीच जो कुछ इन्तज़ाम करने हैं, मैं उन्हें भी कर दूँगी।" राजकुमारी ने कहा।

वह अपने सोने के कमरे में गई। वह रानी के क़मरे से सटा हुआ था। राजकुमारी रानी की मुख्य दासी थी। इसलिए कि रानी के रात को कभी बुलाने पर, वह तुरत जा सके, उनके कमरे अगल बगल में थे। उसने अपने कमरे में, एक कपड़े के तीन टुकड़े किये। उसमें तीन तीन गाँठे बाँधीं, एक को अपनी पलंग के पास, दूसरे को कमरे के बीच में, तीसरे को दरवाज़े के पास रखकर, "रानी, जब पुकारे तो मेरे बदले जवाब देना।" कहकर, वह बाहर चली गयी।

इसके बाद राजकुमार घोड़े पर और राजकुमारी घोड़ी पर सवार होकर, अस्तबल से तेज़ी से भाग निकले।

रात के समय रानी की नीन्द उचटी। "क्यों, सो रही हो?" उसने पूछा।

"नहीं मालकिन! बिस्तर लपेट रही हूँ।" पहिली गाँठ ने कहा। रानी ने करवट ली और फिर सो गयी।

एक घंटे बाद, उसकी नीन्द टूटी। फिर उसने पूछा—"क्यों, क्या कर रही हो?"

"मालकिन, कमरा साफ़ कर रही हूँ।" दूसरी गाँठ ने कहा।

एक घंटे बाद, फिर रानी ने जगकर पूछा—"क्या कमरा साफ़ करना खतम हो गया है?"

"हाँ, हाँ, हो गया है, चूल्हा सुलगाने जा रही हूँ।" तीसरी गाँठ ने कहा।

एक घंटे बाद रानी उठी—"क्या चूल्हा अच्छी तरह जल रहा है?"

कोई जवाब न मिला।

रानी को सन्देह हुआ। वह राजकुमारी के कमरे के अन्दर गयी। वहाँ उसने तीन गाँठें देखीं। "बड़ी अक़्लमन्द है यह। इसने सब मेरी विद्यायें सीख ली हैं। परन्तु मैं उसे राजकुमार से शादी नहीं करने दूँगी। नहीं होने दूँगी।" सोचती वह अस्तबल में गयी। जैसा उसने सोचा था, वही हुआ। बहुत तेज़ भागनेवाले दोनों काले घोड़े वहाँ न थे।

उसने एक नौकर को बुलाकर कहा—"तुम तुरत मेरे मेंढ़े पर सवार होकर जाओ और रास्ते में जो प्राणी मिले उसे ले आओ।" रानी का मेंढ़ा वायु की गति से जानेवाला था। नौकर उस पर सवार होकर निकल पड़ा।

तब तक राजकुमार और राजकुमारी काफ़ी दूर जा चुके थे। पर अभी काफ़ी दूर जाना था।

"वह शोर सुना? वह रानी के मेंढ़े का शोर है।" यह कहकर, राजकुमारी ने

अपने घोड़ों को पौधा बना दिया और अपने को, दो चूहों में परिवर्तित कर लिया।

नौकर जल्दी ही वहाँ आ पहुँचा। "छी, चूहे हैं।" यह सोचकर, वापिस चला गया। उसने रानी के पास जाकर कहा—"मालकिन एक जगह पौधे में दो चूहे खेल रहे हैं, क्या उन्हें पकड़ लाऊँ?"

"क्या यह पूछने के लिए आये हो! कहा तो था, जो प्राणी दिखाई दे, उसे पकड़ लाना। तुरत जाओ।" रानी ने कहा।

इस बार जब मेंढ़ा पास आया, तो राजकुमारी ने घोड़ों को पेड़ बना दिया और वे स्वयं छोटे पक्षी बन गये। नौकर ने आकर देखा। "अरे, छोटी चिड़िया ही तो है...." वह वापिस चला गया। "मालकिन, इस बार चूहे तो नहीं दिखाई दिये, चिड़ियायें दिखाई दीं। क्या उन्हें पकड़ लाऊँ?"

रानी जान गयी कि यह काम उससे न होगा। इस बार वह स्वयं मेंढ़े पर सवार होकर निकली। इससे पहिले कि वह अपने गुलामों तक पहुँच सकती, वे दोनों समुद्र से निकलकर, किनारे पर आ लगे थे। पानी की सीमा के पार कर जाने के बाद, समुद्र रानी की शक्ति किसी काम की न थी। इसलिए उसे वापिस जाना पड़ा।

राजकुमार समुद्र तट पर कुछ दूरी तक चलकर अपने घर पहुँच गया। उसने माता पिता का राजकुमारी से परिचय कराया और बताया कि उसने कैसे कितनी बार उसकी प्राण रक्षा की थी। राजा ने उन दोनों का वैभव के साथ विवाह कर दिया।

अक्लमन्द भेदिया

एक बार चम्पापुर के राजा और नीलगिरि के राजा में शत्रुता हो गयी। दोनों में युद्ध की नौबत आ गयी। भेदियों से यह जानकर कि नीलगिरि राजा युद्ध की तैयारियाँ कर रहा था चम्पापुर के राजा ने भी युद्ध की तैयारियाँ शुरु कीं और उसने कई भेदिये इस काम के लिए नियुक्त किये कि शत्रु के भेदिये उसके अपने देश में न घूम फिर सकें।

इस तरह के भेदियों में एक भिखारी के वेष में घंटापथ से नगर से काफ़ी दूर चला गया। कुछ देर बाद उसकी चप्पल टूट गयी। वह सोच ही रहा था कि क्या किया जाये सौभाग्य से एक पेड़ के नीचे चप्पल सीनेवाला मोची दिखाई दिया।

भेदिये ने अपनी चप्पल उसे देकर कहा—"ज़रा, जल्दी काम पर जा रहा हूँ। जल्दी चप्पल सीकर दो।"

मोची को भेदिये की चप्पल की मरम्मत करता देख, एक राहगीर ने रुककर पूछा—"क्या बाबा, क्या यहाँ काँटों को काँटे पहिना रहे हो! पैरों को क्या कालक्रम पता लगा?"

"क्यों नहीं? तीन पहर पहिले दो पैरों से तीन गये। जो सूर्य पीता है, उसे पीकर तीन मर गये। तीन साल पहिले मरे हुए ने तीनों को मार दिया है।" मोची ने हँसते हुए कहा।

"यानि शक्ति काफ़ी है।" राहगीर ने कहा।

“हाँ, ढ़ेर-सी है। कल जो पैर मिलेंगे, उसके लिए समुद्र के पुत्र प्रतीक्षा कर रहे हैं। भूमि का पेट भर जायेगा।” मोची ने कहा।

राहगीर जा रहा था कि भेदिये ने तलवार निकाली। उसे पकड़ा और उसकी मुश्कें बाँध दीं।

मोची ने कह कहा करते हुए भेदिये से कहा—“वह पगला है। बिना मतलब की बातें बकता है। उसे तुमने क्यों पकड़ लिया है?”

अगले क्षण भेदिया मोची की ओर लपका। उसके भी हाथ बाँध दिये। दोनों को वह राज-सभा में ले गया। “महाराज, ये दोनों शत्रु भेदिये हैं। बड़े चालाक मालूम होते हैं। इनकी सुनवायी करके, ज़रूर सज़ा दीजिये।”

परन्तु न मोची ने, न उनसे बात करनेवाले ने ही यह माना कि वे शत्रु के गुप्तचर थे। उन्होंने कहा कि वे मज़ाक कर रहे थे कि भिखारी का वेष धारण किये व्यक्ति ने सन्देह किया और उन्हें पकड़ लाया।

जब मन्त्री ने पूछा कि वे क्या बातें कर रहे थे। उन्होंने कहा कि उनको वे याद भी न थीं।
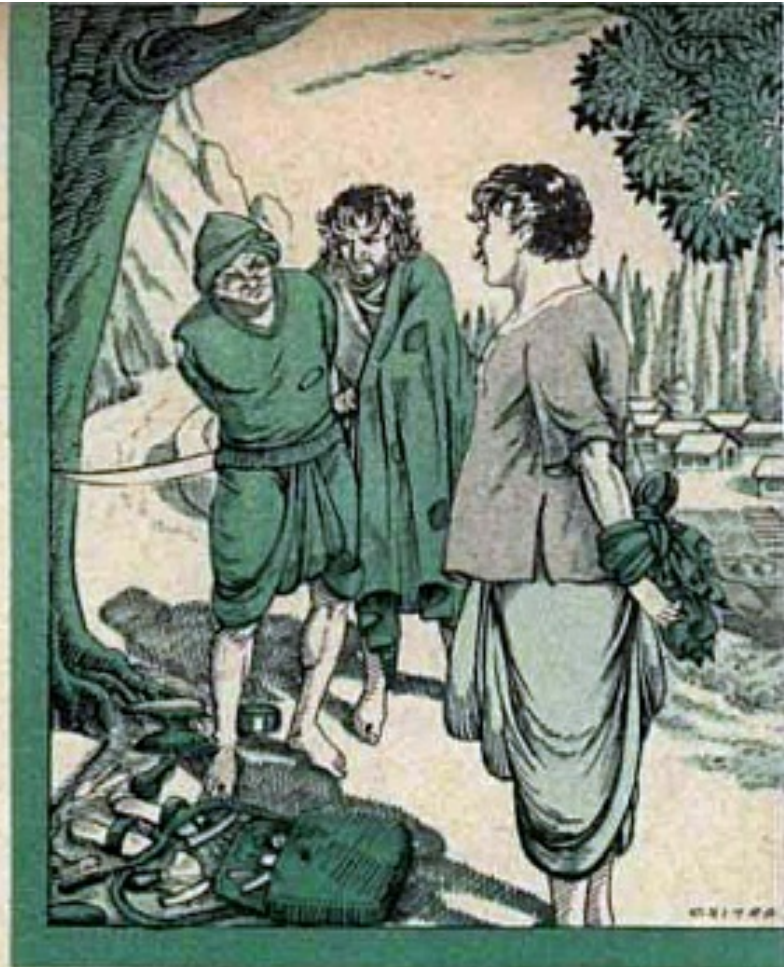
तब मन्त्री ने भेदिये से पूछा। उसने जो कुछ उन्होंने कहा था, पूरा पूरा बता दिया।

वह सुनकर, मन्त्री चकित हो गया। फिर उसने राजा से कहा—“महाराज, यह बड़ा अक़्लमन्द है। इसीलिए यह इतने खतरनाक शत्रु के गुप्तचरों को पकड़ सका। अपने भेदिये को अच्छा ईनाम दीजिये और इन दोनों के सिर कटवा दीजिये।”

“इनकी बातों से तो ये मुझे उतने खतरनाक नहीं लगे।” राजा ने कहा।

"और क्या खतरा चाहिए महाराज? कल जिस रास्ते हमारी सेना जायेगी, उस रास्ते के तालाबों में इन्होंने विष मिला दिया है। यह पानी पीकर, एक गर्भवती स्त्री और एक बच्चा मर गये हैं। ये सोच रहे है कि कल हमारे सैनिक भी इस पानी को पीकर मर जायेंगे।" मन्त्री ने कहा।

"क्या यह सब उनकी बातों में है।" राजा ने पूछा।

"क्यों नहीं है! काँटे को काँटे बाँधने का अर्थ है, चप्पल सीना। मोची को पहिचानकर, दूसरे ने पूछा। क्या यहाँ चप्पल सी रहे हो—यानि उसका असली पेशा चप्पल सीना न था। पैरों को कालक्रम पता लगने का मतलब था मनुष्यों का मरना। भेदिया का प्रश्न था, क्या कुछ पता लगा कि कोई मरा था? दो पैरों पर, तीन आये का मतलब है कि एक गर्भवती स्त्री, एक बच्चे को उठाकर, उस तरफ़ आयी थी। सूर्य क्या पीता है? यानि पानी पीकर तीनों मर गये थे। यह मोची ने बताया। तीन साल पहिले गिरे पेड़ की लकड़ियों से, उसने उनका दहन संस्कार भी कर दिया था। शक्ति काफ़ी है? का अर्थ है, पानी में मिलाया गया विष काफ़ी है। कल मिलनेवाले पैरों के लिए समुद्र के पुत्र प्रतीक्षा कर रहे हैं। यानि इसका अर्थ, हमारे सैनिकों को मारने के लिए, तालाब वगैरह तैयार हैं। यदि अधिक संख्या में सैनिकों को गाड़ दिया गया, तो भूमि का पेट तो भरेगा ही!" मन्त्री ने कहा।

राजा ने शत्रु भेदिये को मौत की सज़ा दी और अपने भेदिया को पुरस्कार।

लोभी व्याधि

पन्नालाल के गाँव से कुछ दूरी पर कनकसिंह नाम का एक ज़मीन्दार रहा करता था। उसके पास ढ़ेर-सा धन था, पर वह बड़ा लालची था। कंजूस भी। उसे दिल का दर्द होने लगा।

दिल का दर्द बहुत बुरी बीमारी है। यदि उसकी चिकित्सा न की गयी, तो खतरा है। और चिकित्सा, बिना पैसे के नहीं होती। दर्द भी हमेशा न रहता। आता और जाता। जब वह चला जाता, तो कनकसिंह सोचा करता कि फिर न आयेगा। परन्तु वह फिर आता और पहिले से अधिक ही आता। तब कनकसिंह सोचता "छी, यह मनहूस दर्द बिना ईलाज के नहीं जायेगा।"

कनकसिंह के घर में एक नौकर था, जिसका नाम वेन्कड़ था। वेन्कड़ वेतन पर रखा गया नौकर न था। उसने कनकसिंह से कर्ज़ ले रखा था और जब वह कर्ज़ न चुका सका, तो वह उसका काम करके कर्ज़ चुका रहा था। कनकसिंह ने वेन्कड़ को बुलाकर पूछा—"क्या, तुम किसी वैद्य को जानते हो, जो दिल दर्द की बीमारी ठीक कर सके?"

"हमारे गाँव में एक को दिल में दर्द हुआ करता था। वह भस्मों के वैद्य के पास दवा लिया करता था वह वैद्य कहाँ रहता है, यह मालूम करके, मैं आपको बता दूँगा।" वेन्कड़ ने कहा।

"उसके बारे में जानने की क्या ज़रूरत है, तुम अपने गाँववाले से ही पूछकर आना, दो आने की दवा लेते आना।" कनकसिंह ने कहा। वेन्कड़ को चूँकि कर्ज़ देना था,
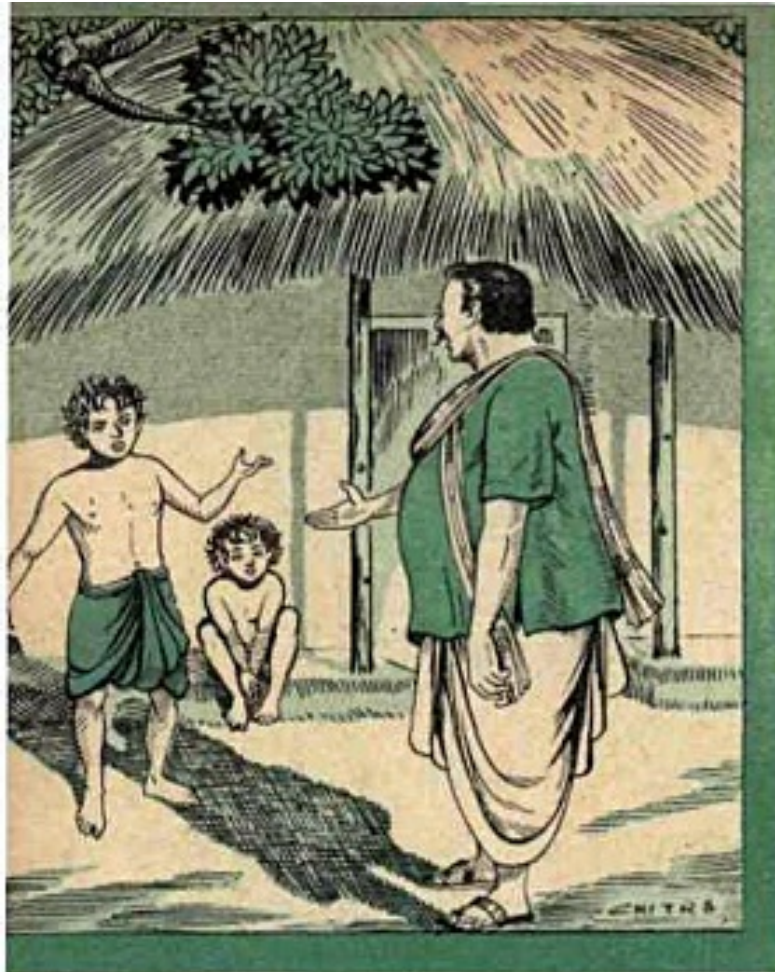
कनकसिंह ने वेन्कड़ से कहा। वेन्कड़ ने अगले दिन आकर सारी जानकारी दे दी।

भस्म वैद्य का गाँव चार मील दूर था। वह गरीबों से सप्ताह भर की दवा के लिए चार आने लिया करता और जो दे सकते थे, उनसे रुपये से कम न लेता।

यह जान कनकसिंह को बड़ी फिक्र हुई। प्रति सप्ताह रुपये रुपये की दवा लेना उसको बिल्कुल न जंचा। अगर दवा नहीं लेता है, तो दर्द के मारे जान भी जा सकती थी। आखिर तीन दिन बाद उसने एक निर्णय किया।

इसलिए कनकसिंह ने उसके हाथ में पैसे नहीं रखे। वेन्कड़ ने अपने गाँववाले को पटाया और जो दवा वह ले रहा था, उसे लाकर कनकसिंह को दी। कनकसिंह उसे थोड़ा थोड़ा करके लेने लगा। पर दर्द न गया। दवा खतम हो गई। कनकसिंह ने थोड़ी और दवा लाने के लिए वेन्कड़ से कहा।

"अब वहाँ दवा नहीं मिलेगी। उसका दर्द खतम हो गया है और उसने दवा छोड़ दी है।" वेन्कड़ ने कहा।

"तो मालूम करो कि वह वैद्य कहाँ रहता है और किस प्रकार दवा देता है।"

एक दिन कनकसिंह ने वेन्कड़ से कहा—"मैं ज़रा ज़रूरी काम पर बाहर जा रहा हूँ। जब तक मैं वापिस न आ जाऊँ, तुम यहीं रहना, कहीं न जाना।" वह सीधे वेन्कड़ के गाँव गया और उसके झोंपड़े में घुसा। घर में वेन्कड़ के दो लड़के थे। जब उसने पूछा—"तुम्हारी माँ कहाँ है?" तो उन्होंने बताया कि खेत में घास काटने गई हुई है।

वेन्कड़ के बारह वर्ष के बड़े लड़के के हाथ में चवन्नी रखकर कनकसिंह ने कहा—"क्या तुम भस्मवाले वैद्य का गाँव

घर वगैरह जानते हो? तुम कहना कि तुम्हारे पिता को दिल का दर्द हो गया है और एक सप्ताह की दवा लेते आना। वैद्य से क्या कहोगे?"

"तुम्हारे आने तक मैं यहीं रहूँगा।" कनकसिंह ने कहा।

वेन्कड़ का लड़का चवन्नी लेकर, खेतों की पगडडी से जा रहा था कि उसकी माँ ने जो वहाँ घास काट रही थी, उसे देखा। "कहाँ जा रहे हो?" उसने पूछा।

"पिता जी को दिल का दर्द हो गया है। बहुत तकलीफ़ में है। कनकसिंह भी हमारे घर आये हुए हैं। मुझे चवन्नी देकर दवा लाने के लिए भेजा है।" लड़के ने कहा।

वेन्कड़ की पत्नी घबरायी—"अरे, यह क्या आफ़त है? तुम क्या दवा लाओगे। मैं जाऊँगी।" कहकर उसने चवन्नी ले ली। दो मील की दूरी पर वैद्य के गाँव में पहुँची। वैद्य के घर जाकर उसने कहा—"बाबा, हमारे उनको दिल के दर्द से बड़ी तकलीफ़ हो रही है। यह चवन्नी लेकर, ज़रा दवा दे दीजिये।"

वैद्य ने उसे ध्यान से देखा। बिना रोगी को देखे दवा न दूँगा।" उसने कहा।

वेन्कड़ की पत्नी, उसके पैरों पर पड़कर गिड़गिड़ाने लगी—"रोगी, कनकसिंह के घर है। चल नहीं सकता। दवा देकर उसके प्राणों की रक्षा कीजिये।"

"कनकसिंह बड़े ज़मीन्दार है। जो उसके घर काम कर रहा है, उसको, उन्हें ही तो दवा देनी चाहिए। दवा के लिए रुपये से कम नहीं लूँगा। फिर भी रोगी को देखना पड़ेगा।" वैद्य ने कहा।

वेन्कड़ की पत्नी ने यह बताकर कि वह वैद्य के लिए काम नहीं कर रहा था बल्कि कर्ज़ चुकाने के लिए कर रहा था। वैद्य को आने के लिए कहा—"मैं चला कैसे आऊँ? मेरे लिए लोग दूर दूर से आते हैं। इस आदमी को देखो, दो कोस से मुझे ले जाने के लिए गाड़ी लाया है।"

वैद्य ने जिस आदमी को दिखाया था, वह पन्नालाल ही था। जो कुछ उन दोनों में बातचीत हुई थी, वह सुन रहा था। उसने वेन्कड़ की पत्नी से कहा—"मेरी गाड़ी में आओ। तुम्हारे पति को ले आयेंगे। वैद्य जी उसे देखकर दवा देंगे।"

पन्नालाल वेन्कड़ की पत्नी को गाड़ी में बिठाकर कनकसिंह के घर पहुँचा। वेन्कड़ वहीं था। उसे अपनी पत्नी को देखकर आश्चर्य हुआ। पत्नी ने भी अपने पति को स्वस्थ देखकर पूछा—"क्यों, तुम्हारी बीमारी ठीक हो गई है?"

"मुझे क्या बीमारी थी? मैं तो ठीक हूँ।"

"मालिक भी ठीक हैं। कहीं किसी और गाँव को जाने के लिए सवेरे ही चले गये थे। रास्ते में जब अपना लड़का मिला, तो उससे कुछ कहा होगा और उसने उसे ठीक समझा नहीं होगा।" वेन्कड़ ने कहा।

पति पत्नी ने पन्नालाल से माफी माँगी कि उसे व्यर्थ ही उन्होंने कष्ट दिया था। पन्नालाल गाड़ी चलाता अपने गाँव गया।

वेन्कड़ की झोंपड़ी में इन्तज़ार करते कनकसिंह ने उसके लड़के को वापिस आया देखकर पूछा—"भाई, दवा कहाँ है? इतनी जल्दी कैसे चले आये?"

"दवा मेरी माँ ला रही है।" लड़के ने बताया।

वेन्कड़ की पत्नी काफ़ी प्रतीक्षा के बाद भी न आयी। कनकसिंह को दर्द शुरू हुआ और बढ़ता गया। लड़के से यह कहकर कि वह जा रहा था, स्वयं वैद्य के ग्राम की ओर चलने लगा। वह इस ख्याल में था कि रास्ते में वेन्कड़ की पत्नी दवा लाती उसे दिखाई देगी।

यदि वह न लाई, तो उसे वैद्य के पास जाना ही होगा। उसे देखकर रईस समझकर वैद्य पहिले रुपया माँगेगा—इस डर से कनकसिंह ने अपनी अंगुली की अंगूठी, रुपये की थैली, कुड़ता निकालकर, उन सबको एक गठरी में बाँध, दूसरे हाथ से दिल थामकर चलने लगा और चलते चलते बेहोश हो गिर गया।

गाड़ी लेकर, पन्नालाल उस तरफ़ आ रहा था। पन्नालाल को देखकर उसने गाड़ी रोकी। उसके मुँह पर पानी छिड़का और उसको होश में लाया।

आँखें खोलते ही कनकसिंह ने पूछा—"क्या दवा ले आये हो?"

उसकी यह बात पन्नालाल को न समझ आयी, उसने कनकसिंह को गाड़ी में बिठाया और उसे वैद्य के पास ले गया।
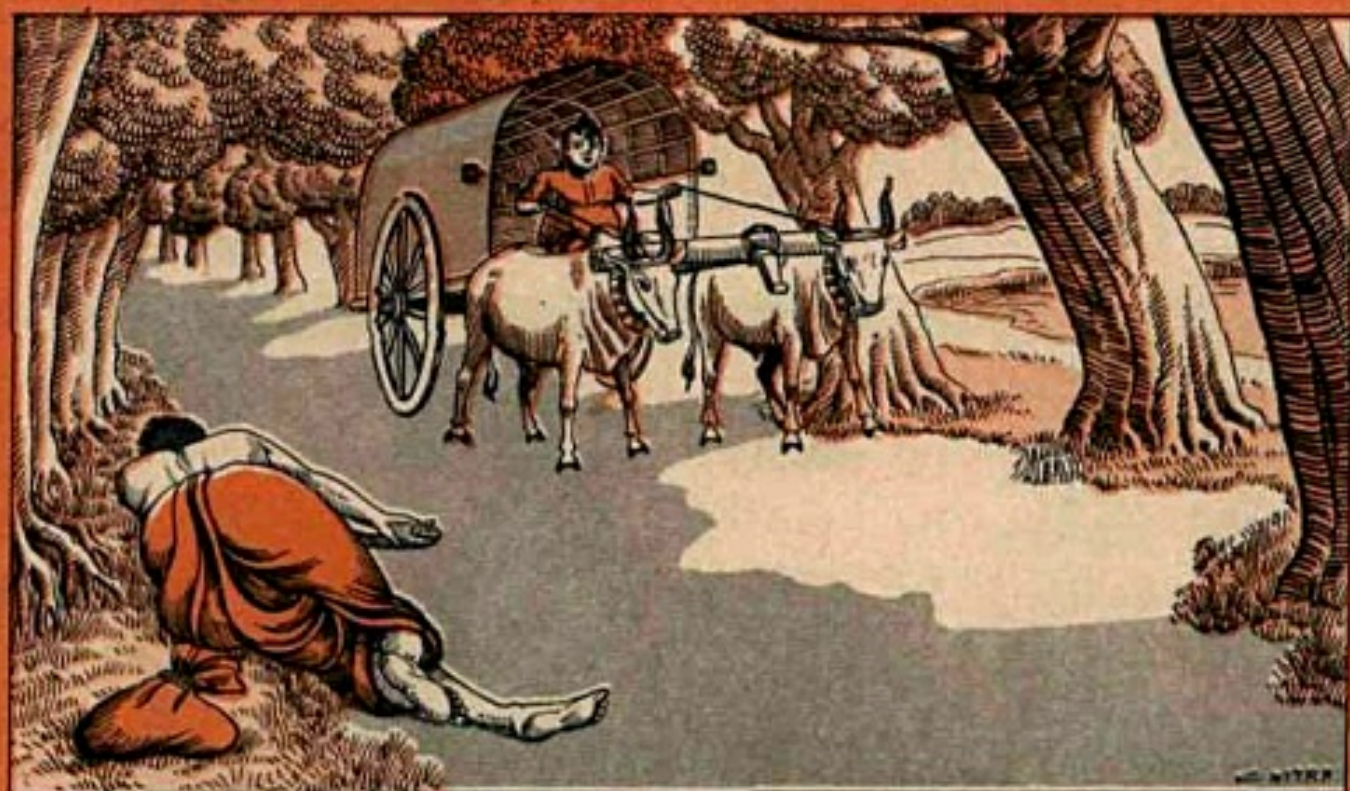
वैद्य ने रोगी की परीक्षा करके कहा—"रोग बहुत बढ़ गया है। रोज परीक्षा करके ही दवा देनी होगी, किनका आदमी है यह?"

"मुझे नहीं मालूम। कोई अनाथ मालूम होता है? आप ईलाज कीजिये। मैं उसे रोज गाड़ी में ले आऊँगा। दवा का खर्च भी दे दूँगा।" पन्नालाल ने कहा।

कनकसिंह को अगले दिन तक पूरा होश न आया, होश आते ही उसने पन्नालाल से पूछा—"आप कौन हैं? मैं कहाँ हूँ?"

"अच्छी जगह ही है, कोई डर नहीं। तुम कौन हो? तुम्हारा नाम क्या है?" पन्नालाल ने पूछा।

"मेरे नाम से क्या करोगे? कोई अनाथ हूँ। मेरी गठरी कहाँ है?" कनकसिंह ने पूछा।

"तुम्हारी गठरी वगैरह सब ठीक है। सप्ताह भर तुम ईलाज करवाओ। फिर तुम जहाँ चाहो, वहाँ चले जाना।" पन्नालाल ने कहा। उसका ख्याल था कि कनकसिंह कहीं भाग न जाये, इसलिए ही उसने यह इन्तज़ाम किया था।

पर कनकसिंह के परिवार के लोग यह न जान सके कि उसको क्या हो गया था। जब उन्होंने खोजखाज की तो उन्होंने उसको पन्नालाल के घर पाया। जब पन्नालाल को मालूम हुआ कि वह अनाथ नहीं था, बड़ा अमीर था, तो कनकसिंह को बड़ा नीचा देखना पड़ा। उसने बहाना किया कि बीमारी के कारण वह पगला-सा गया था। उसने ईलाज का खर्च ही न दिया, पन्नालाल को कुछ भेंट देकर वह अपने गाँव चला गया। कुछ सप्ताह चिकित्सा करवाने के बाद कनकसिंह की बीमारी भी जाती रही।

उत्तरकाण्ड

कार्तवीर्यार्जुन से पराजित होकर भी, रावण का गर्व कम न हुआ। वह संसार में फिरता, बलवान राक्षसों और मानवों को ललकारता रहता। एक बार वह किष्किन्धा गया और उसने वाली को युद्ध के लिए ललकारा।

वाली के मन्त्री तार ने रावण से कहा—"रावण, इस समय वाली किष्किन्धा में नहीं है और शेष वानर, तुम्हारे साथ युद्ध नहीं कर सकते हैं। वाली सन्ध्या करने के लिए समुद्र तट पर गया हुआ है। यह देखो, हड्डियों का टीला है। यह वाली के हाथ मरे लोगों की राख है। यदि तुम भी इस ढ़ेर में जाना चाहता हो, तो कुछ देर ठहरो। वाली वापिस आ जायेगा और अगर जल्दी है, तो दक्षिण समुद्र तट पर जाओ। उस हालत में वाली के हाथ शीघ्र मारे जा सकते हो।"

रावण ने तार को डाँटा फटकारा। पुष्पक पर दक्षिण समुद्र तट पर गया। वहाँ, उसको मेरुपर्वत के समान वाली को सन्ध्या करते देखा।

रावण पुष्पक से उतरा। उसको पीछे से पकड़ने के लिए, बिना आहट किये, चुपचाप उसके पास गया। पर तुरत

वाली पीछे मुड़ा। वह जानता था, रावण किस उद्देश्य से आ रहा था। फिर भी उसने यूँ दिखाया, जैसे कुछ न जानता हो।

परन्तु रावण के पास आते ही वाली ने रावण को पकड़ा और उसको बगल में दबाकर, आकाश में उड़ चला।

रावण को छुड़ाने के लिए उसके मन्त्री चिल्लाते-चिल्लाते वाली के पीछे भागे। वे कुछ दूर गये तो, पर वाली को न पकड़ पाये। वे थक थकाकर पीछे चले आये। यह अच्छा ही हुआ, नहीं तो वे भी वाली द्वारा पकड़ लिये जाते और खतम कर दिये जाते।

वाली रावण को बगल में दबाकर, पश्चिमी समुद्र तट पर उतरा। वहाँ उसने स्नान किया। सन्ध्या की।

उत्तर समुद्र की ओर गया और वहाँ से पूर्वी समुद्र की ओर सब जगह सन्ध्या वगैरह करके, रावण को लेकर, वह किष्किन्धा गया।

किष्किन्धा के उद्यान में, वाली ने रावण को नीचे उतारा, हँसते हुए पूछा—"क्यों, रावण? कहाँ से आ रहे हो?"

रावण ने वाली से क्षमा माँगते हुए कहा—"तुम-सा बलशाली, वेगवान सृष्टि में और कोई नहीं है। मुझे तुम अकेले ही चार समुद्रों में डुबकी लगवा सके। मैं तुमसे अग्नि का प्रमाण करके, मैत्री करना चाहता हूँ।"

दोनों ने अग्नि जलायी, आलिंगन किया, भातृ-स्नेह की दीक्षा ली। रावण किष्किन्धा में एक महीना रहा। उसका वह सब आदर सत्कार हुआ, जो सुग्रीव का होता था। फिर रावण को उसके मन्त्री आकर, लंका ले गये।

अगस्त्य ने, राम को यह वृत्तान्त सुनाकर कहा—"राम, जो तुम्हारे एक बाण से मारा गया, वह वाली उतना बलवान था।"

इस पर राम ने कहा—"अगस्त्य महर्षि! वाली का बल, रावण का बल, मैं मानता हूँ। अपूर्व है। पर मेरी राय में, हनुमान इन सबसे भी अधिक बलवान है। उसने सौ योजन समुद्र को पार किया। रावण की लंका में अन्तःपुर में घुस गया, कितने ही राक्षसों को उसने अकेला मार दिया। यही नहीं, लंका नगरी को भी जला दिया। जो साहस कृत्य उसने किये हैं, मैं नहीं समझता, तीनों लोकों में किसी और के लिए सम्भव हैं। उस जैसे बलवान ने क्यों नहीं वाली को मार दिया? क्यों उसने राजा सुग्रीव को इतने कष्ट उठाने दिये? मेरे इस सन्देह का निवारण कीजिये।"

यह सुन अगस्त्य ने कहा—"राम, हनुमान के बारे में जो कुछ आपने कहा है, वह बिल्कुल ठीक है। उसके जितना, बलवान, बुद्धिमान, वेगवान और कोई नहीं है। उसने बहुत छुटपन में ही बहुत-से

आश्चर्यजनक कार्य किये। शायद उसको वे बातें याद भी नहीं हैं। परन्तु मुनियों ने उसको बचपन में ही शाप दिया था। वह घड़ी विचित्र कथा है। सुनिये, सुनाता हूँ।"

हनुमान का पिता केसरी मेरु पर्वत पर राज्य किया करता था। केसरी की पत्नी अंजना थी। उसके वायुदेव से हनुमान पैदा हुआ। बच्चे हनुमान को वह एक जगह लिटाकर, फल लाने के लिए जंगल में गयी। इतने में हनुमान भूख के कारण चिल्लाने लगा। उसी समय पूर्वी पर्वत के पीछे सूर्योदय हुआ। उसे कोई फल जानकर, उसे पकड़ने के लिए शिशु आकाश में उड़ा। सूर्य के सामने, एक और सूर्य की तरह हनुमान को जाता देख, देवता, दानव, यक्ष चकराये। क्योंकि तभी उसका वेग, वायु और गरुड़ के वेग से अधिक था।

इस प्रकार सूर्य की ओर उड़ते हुए अपने लड़के के साथ वायुदेव भी उड़ा और कहीं उसको सूर्य की गरमी न लग जाये, इसलिए वह उस पर ओस गिराता गया। इस प्रकार अपने पास आते हुए बाल हनुमान का सूर्य भी कुछ न बिगाड़ सका। वह सुरक्षित रहा।

यही नहीं, जब हनुमान सूर्य के पास पहुँच रहा था, तभी सूर्य को पकड़ने के लिए, राहु उसके रथ पर सवार हो गया।

राहु को देखते ही हनुमान सूर्य को छोड़कर, उसको पकड़ने के लिए लपका। राहु घबराकर भाग गया।

भरी सभा में इन्द्र के पास जाकर, उसने कहा—"इन्द्र, यह भी क्या अन्याय है ? पर्व समय में, मैं सूर्य को निगलना

चाहता था कि तुमने वहाँ एक और राहु भेज दिया। उसने सूर्य के साथ मुझे भी खाने की कोशिश की।"

तुरत इन्द्र, राहु को साथ लेकर, ऐरावत पर सवार हो, सूर्य के पास आया। हनुमान तब भी वहीं था। राहु को देखते ही वह उसकी ओर लपका। "इन्द्र, रक्षा करो, रक्षा करो।" राहु चिल्लाया।

"मैं इसे मार दूँगा। डरो मत।" इन्द्र राहु से कह ही रहा था कि हनुमान ने ऐरावत को देखा और उसे कोई सफेद फल जानकर, उसकी ओर गया।

इन्द्र ने अपने हाथ के वज्र से हनुमान को धीमे से मारा। उस चोट के कारण, बाल हनुमान एक पहाड़ पर गिर गया। उसका बायाँ जबड़ा टूट गया।

वायुदेव भी इन्द्र से क्रुद्ध हो उठा। क्योंकि उसने उसके लड़के को मारा था, उसने सारे संसार में संचार करना छोड़ दिया और अपने लड़के को ले जाकर, एक गुफा में बैठ गया। सब प्राणी घुटने से लगे। गन्धर्व और देवता, ब्रह्मा के पास जाकर रोये। ब्रह्मा उन सबको साथ लेकर, वायुदेव की गुफा के पास आये। ब्रह्मा
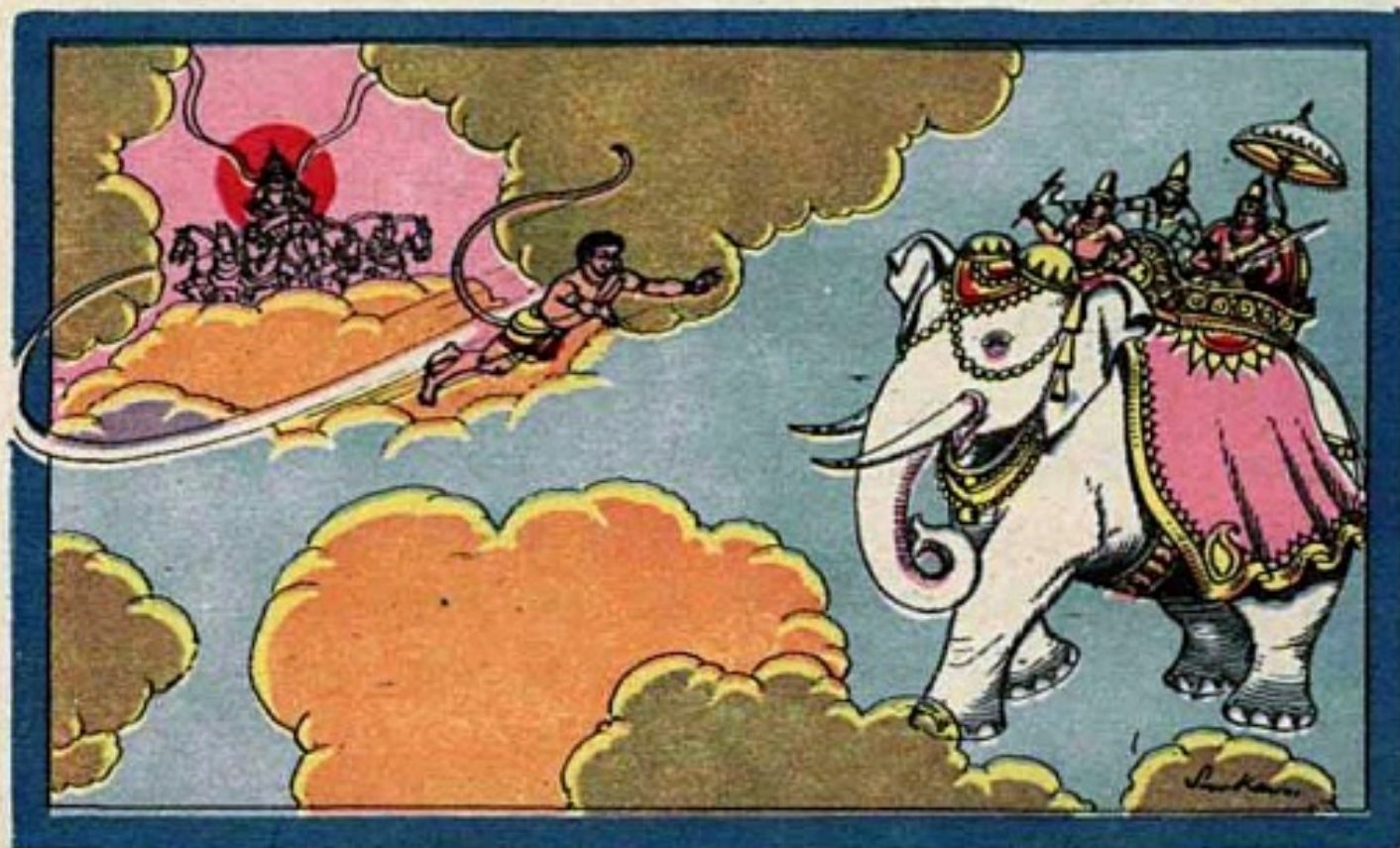
को देखते ही वायुदेव अपने लड़के को उठाकर, उसके पैरों पड़ा।

ब्रह्मा के अपने हाथ से रगड़ते ही, हनुमान जो तब तक कुछ कुछ बेहोश-सा था, पहिले की तरह हो गया। वायु यह देख, बड़ा खुश हुआ और फिर संसार में संचार करने लगा।

वायुदेव को और सन्तुष्ट करने के लिए ब्रह्मा ने दिक्पालकों को, हनुमान को वर देने के लिए कहा। क्योंकि उसके कारण "हनु" (जबड़ा) टूटा था, इसलिए इन्द्र ने उसका नाम हनुमान रखा और वर दिया कि कभी वज्र की चोट उसे न लगे।

सूर्य ने अपने तेजस का सौवाँ हिस्सा हनुमान को दिया और यह भी वर दिया कि वह बड़ा भक्त और महापंडित हो।

वरुण ने वर दिया कि उसे जल में कोई आपत्ति न हो। यम ने वर दिया कि कालदण्ड से उसकी मृत्यु न हो। कुबेर ने वर दिया कि उसकी गदा से हनुमान को कोई हानि न हो। शिव ने वर दिया कि उससे या उसके शस्त्रों से हनुमान का कोई नुक्सान न हो। ब्रह्मा और विश्वकर्मा ने भी कुछ ऐसे ही वर दिये।

इन वरों के कारण, हनुमान शत्रुओं के लिए भयंकर और युद्ध में अपराजेय हो गया। वह काम रूपी और काम गमन वाला भी हो गया। वायुदेव के सन्तोष की सीमा न थी।

इसके बाद अपार बल सम्पन्न हो, हनुमान निर्भय हो आश्रमों में रहनेवाले मुनियों को खूब सताने लगा। यह जानकर कि उसको देवताओं से वर मिले हुए थे, यद्यपि वह उनके वल्कल वस्त्र, पात्र और

आसनों का नाश कर रहा था, तो भी वे चुप रहे। केसरी और वायुदेव ने भी उसे मनाया, पर उसने अपनी शरारत न छोड़ी। आखिर महर्षी हनुमान से रूठ गये। "तुम अपने बल के बूते पर ही तो यह शरारत कर रहे हो। जब तक कोई और न बताये तब तक तुम्हारा बल तुमको न मालूम हो।" उन्होंने शाप दिया।

इसके बाद, हनुमान को अपनी शक्ति का ही भास न रहा और सुधरकर, आश्रमों में रहने लगा। उस समय वाली और सुग्रीव का पिता, ऋक्षरचस वानरों का राजा मर चुका था। तब वानरों ने बड़े भाई वाली का राज्याभिषेक किया और छोटे भाई को युवराज बना दिया। हनुमान छुटपन में ही सुग्रीव का मित्र बन गया। पर जब वाली और सुग्रीव में झगड़ा हुआ और सुग्रीव नाना कष्ट उठाता रहा, तब हनुमान को अपने बल के बारे में कोई ख्याल न था, इसलिए वह उसकी मदद न कर सका।

इस प्रकार हनुमान की कहानी सुनाकर, अगस्त्य महामुनि ने कहा—"राम, आप इस हनुमान को क्या समझ रहे हैं? यह व्याकरण सीखने के लिए, सूर्य के साथ उदयगिरि से अस्तगिरि तक घूमा करता। किसी भी विद्या में इसके समान कोई नहीं है। यह होनेवाला ब्रह्मा है।"

हनुमान की कहानी सुनने के बाद, राम ने अगस्त्य से पूछा—"वाली और सुग्रीव का पिता ऋक्षरचस कौन था? उनकी माता कौन थी? उनकी कथा भी सुनाइये।"

व्रत का फल

कावेरी नदी के तट पर, ब्राह्मणों के ग्राम में एक वेदों का पंडित धनी ब्राह्मण रहा करता था। उसके कई दिनों तक सन्तान न हुई। जब वह अधेड़ हो गया, तो उसके एक लड़की हुई। इकलौती सन्तान थी। उसको बड़े लाड़-प्यार से उसने पाला पोसा। उसका नाम शारदा रखा।

कुछ दिन बीते। शारदा सयानी हुई। तब उसके पिता ने योग्य वर के लिए बहुत खोज की, कितने ही ग्राम उसने देखे। अन्त में एक ग्राम में, वेदों का अध्ययन करनेवाले एक युवक से उसने उसका विवाह कर दिया। परन्तु विवाह के दिन ही वर को साँप ने काटा और वह मर गया। शारदा, विवाह के मुहूर्त में विधवा हो गई। वह दुःख के साथ जीवन बिताने लगी।

एक दिन ध्रुव नाम का बूढ़ा ब्राह्मण शारदा के घर गया। शारदा ने उसके चरणों की वन्दना की। वह बूढ़ा ब्राह्मण अन्धा भी था, वह न जानता था कि शारदा विधवा थी। उसने आशीर्वाद दिया "दीर्घ सुमंगली भव"

"स्वामी, यह क्या आशीर्वचन है? मैं तो विवाह के दिन ही विधवा हो गयी थी।" शारदा ने कहा।

"बेटी, मैं जन्म से अन्धा हूँ। इसलिए यह न जान सका। परन्तु मेरे मुख से निकला हुआ आशीर्वचन व्यर्थ नहीं जाता। तुम से मैं उमामहेश्वर व्रत करवाऊँगा। मेरा आशीर्वाद सच होगा और तुम सुमंगली बन सकोगी।" ध्रुव ने कहा।

शारदा ने अत्यन्त श्रद्धा और भक्ति से उमामहेश्वर व्रत किया। व्रत की समाप्ति पर

पार्वती प्रत्यक्ष हुई और उसने शारदा को वर माँगने के लिए कहा ।

तब ध्रुव ने पार्वती को अपने आशीर्वाद के बारे में बताकर कहा कि वह वर दे कि शारदा दीर्घ सुमंगली बने। यह सुनकर पार्वती ने शारदा के पूर्व जन्म का वृत्तान्त यूँ बताया ।

पूर्व जन्म में शारदा पान्ड्य देश में रहनेवाले एक ब्राह्मण की पत्नी थी, उस ब्राह्मण की दो पत्नियाँ थीं। शारदा उसकी दूसरी पत्नी थी। शारदा चूँकि बड़ी खूबसूरत थी, इसलिए पति उसको अधिक चाहता। उसके साथ ही रहता, उसने अपनी पहिली पत्नी की बिल्कुल उपेक्षा की। पति के प्रेम के गर्व में, शारदा ने अपनी सौत को बहुत तंग किया। उसको नौकरानी से भी अधिक नीच दृष्टि से देखा। पति की उपेक्षा और सौत का व्यवहार वह न सह सकी और उसी कष्ट में वह मर गयी। और तभी एक युवक शारदा के सौन्दर्य पर मुग्ध हो गया। परन्तु शारदा पतिव्रता थी, इसलिए उसने युवक को पास तक न आने दिया—यह देख युवक पागल-सा हो गया। वह देश विदेश में घूमता दिन

गत शारदा को स्मरण किया करता और उसे स्मरण करता करता वह मर गया।

इस जन्म में, उस युवक से ही शारदा का विवाह हुआ था. इसका कारण उसका मृत्यु पर्यन्त उसका स्मरण करना ही था। परन्तु पूर्व जन्म की सौत ने साँप के रुप में आकर उस युवक को डसा। क्योंकि पूर्व जन्म में शारदा ने उसको अपने पति से दूर रखा था, इसलिए इस जन्म में, उसने शारदा को अपने पति से दूर रखा।

पार्वती ने बूढ़े ब्राह्मण को यह वृत्तान्त सुनाकर कहा—"शारदा ने कितनी ही भक्ति से यह व्रत किया है। मैं सन्तुष्ट हूँ। उसको सुमंगली होने का मैं उपाय बताती हूँ। इसका पूर्व जन्म का पति फिर पान्ड्य देश में पैदा हुआ है। काल क्रम से ये फिर मिलेंगे और फिर पति-पत्नी बनेंगे।" यह कहकर पार्वती अन्तर्धान हो गई।

"बेटी, तुमने पार्वती का कहा सुन लिया है। अब शोक न करो। तुम्हारा व्रत सफल हो गया है। मेरा आशीर्वाद सच निकलता है। भक्ति और श्रद्धा से पार्वती देवी का स्मरण करो और भवितव्य

की प्रतीक्षा करो।" यह कहकर ध्रुव चला गया।

इसके बाद, शारदा को रोज सपने में एक युवक दिखाई देने लगा और उसके साथ रहने लगा। कुछ समय बाद वह गर्भवती हुई। यह बात पता लगते ही, गाँववालों ने गुस्से में कहा—"यह कुलटा है। इसके नाक कान काट दिये जायें।"

तब आकाशवाणी हुई। "यह बड़ी पतिव्रता है। जो इनकी निन्दा करेंगे उनके सिर टूट जायेंगे।" यह सुन वे डर गये और उसकी निन्दा करना छोड़ दिया। शारदा भी शर्मिन्दा हुई। उसने बता दिया कि सपने में वह किसी के साथ गृहस्थी कर रही थी और उस कारण से ही वह गर्भवती हो गई थी। कालानुसार उसने एक लड़के को जन्म दिया।

कुछ दिनों बाद, शारदा अपने लड़के को लेकर गोकर्ण क्षेत्र गई। वहाँ नाना देश के लोग आये हुए थे। उनमें से पान्ड्य देश से आये हुए एक ब्राह्मण ने शारदा को देखा और उसने उसको देखकर पहिचान लिया कि वह ही उसकी स्वप्न पत्नी थी। उसने उससे बात की। शारदा भी उसको देखते ही जान गई कि वह उसका स्वप्न पति था।

दोनों ने बातों बातों में एक दूसरे के बारे में जाना। शारदा ने ध्रुव के आशीर्वाद और पार्वती के अनुग्रह के बारे में उससे कहा। वह ब्राह्मण यह सुनकर बड़ा सन्तुष्ट हुआ, वह शारदा को अपने देश ले गया और उसने उसको अपनी पत्नी के रूप में और उसके लड़के को, अपने लड़के के रूप में स्वीकार किया।

५१. रश्मोर चोटी

गुट्सन बोरग्लम नामक शिल्पी ने अमेरिका के इस शिखर पर, अमेरिका के चार अध्यक्षों की—वाशन्गिटन, जफर्सन, थियोडोर रुज़वेल्ट और लिन्कन की मूर्तियाँ बनायी हैं। एक एक का सिर ६० फीट ऊँचा है। इस कार्य को करने के लिए १४ वर्ष लगे। इस शिल्पी की मृत्यु १९४१ में हो गई।

Photo by A. L. Syed
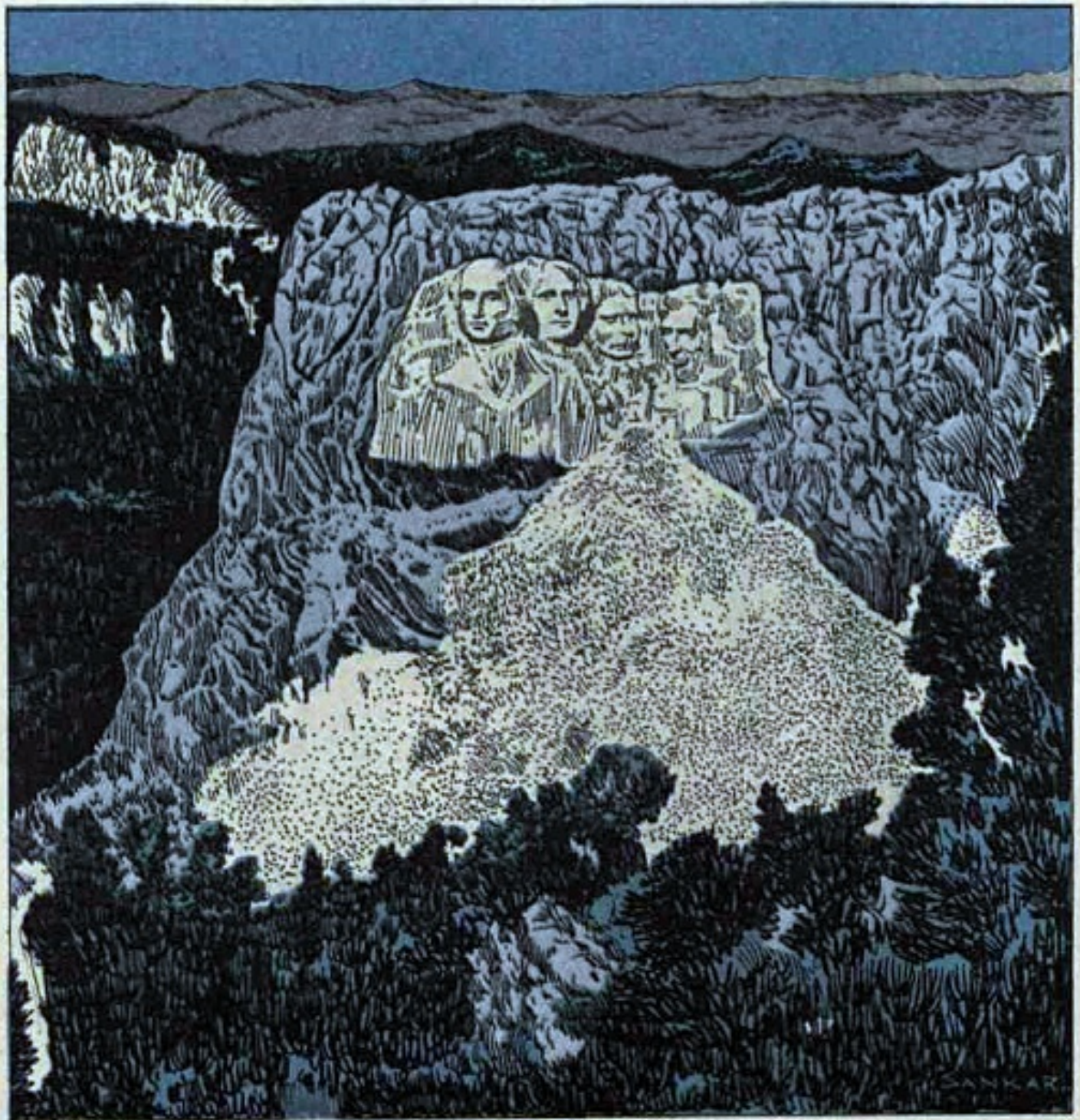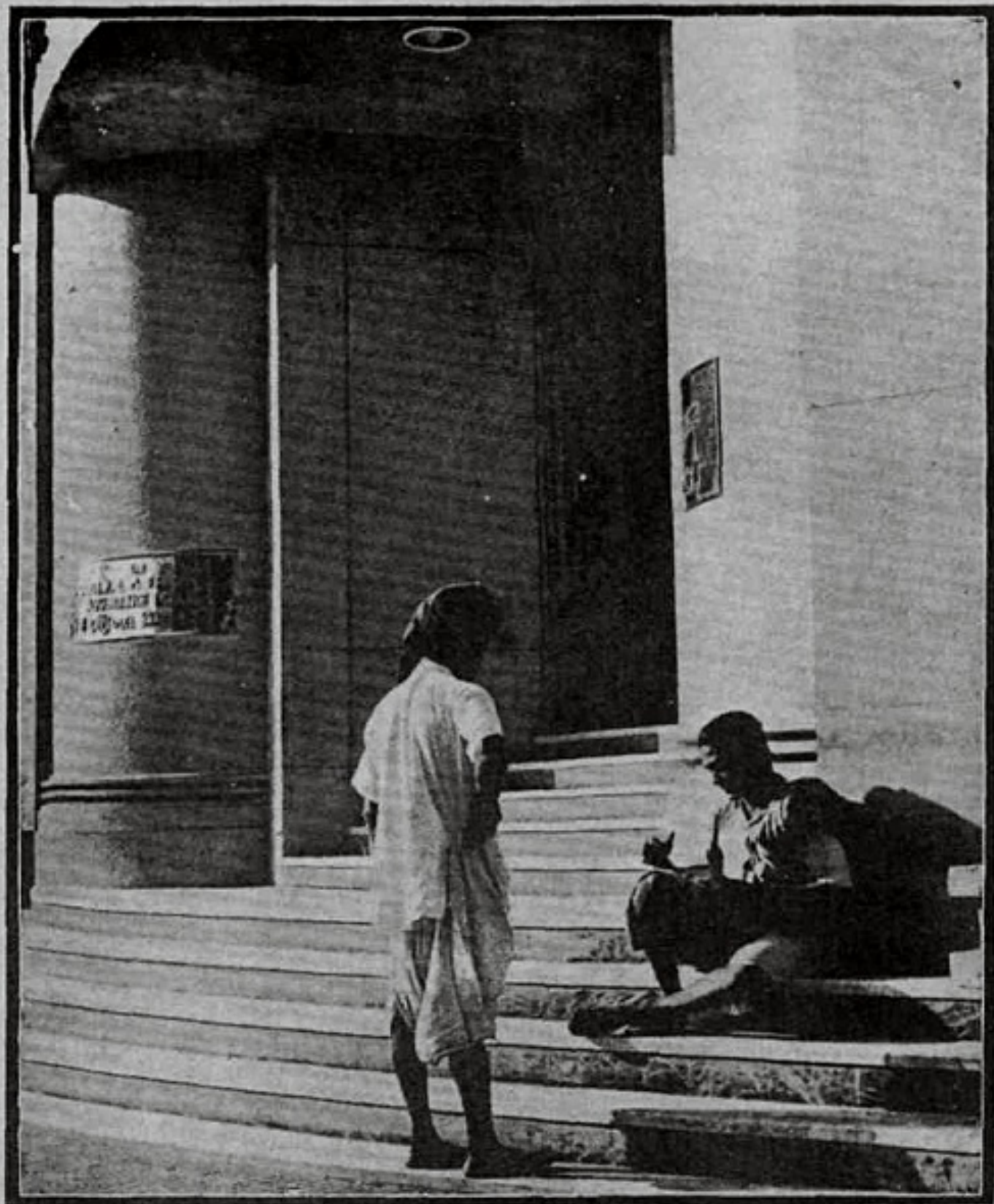
पुरस्कृत परिचयोक्ति

मेरी चिट्ठी लिख दो भइया!

प्रेषक: सरफुद्दीन - दुर्ग

Photo by Prabhakar Mahadik

पुरस्कृत परिचयोक्ति

मुझ पर स्नेह दिखाती मइया !!

प्रेषक: सरफुद्दीन - दुर्ग

फ़ोटो - परिचयोक्ति - प्रतियोगिता

मई १९६६ :: पारितोषिक १०)

कृपया परिचयोक्तियाँ कार्ड पर ही भेजें !

ऊपर के फ़ोटो के लिए उपयुक्त परिचयोक्तियाँ चाहिए। परिचयोक्तियाँ दो तीन शब्द की हों और परस्पर संबन्धित हों। परिचयोक्तियाँ पूरे नाम और पते के साथ कार्ड पर ही लिखकर निम्नलिखित पते पर तारीख ७ मार्च १९६६ के अन्दर भेजनी चाहिए।

फ़ोटो-परिचयोक्ति-प्रतियोगिता
चन्दामामा प्रकाशन,
वड़पलनी, मद्रास-२६

मार्च – प्रतियोगिता – फल

मार्च के फ़ोटो के लिए निम्नलिखित परिचयोक्तियाँ चुनी गई हैं। इनके प्रेषक को १० रुपये का पुरस्कार मिलेगा।

पहिला फ़ोटो: मेरी चिट्ठी लिख दो भइया !

दूसरा फ़ोटो: मुझ पर स्नेह दिखाती मइया !!

प्रेषक: सरफ़ुद्दीन "निगाला",
C/o अलाउद्दीन "निगला", रानीपटी बाज़ार - दुर्ग (म.प्र.)

Printed by B. NAGI REDDI at the B. N. K. Press Private Ltd., and Published by B. VISWANATHA REDDI for Sarada Binding Works, 2 & 3, Arcot Road, Madras-26. Controlling Editor: 'CHAKRAPANI'

सब्ज़ी की खेती करने में बड़ा मज़ा आता है। स्कूल में हम सब्ज़ी की खेती करना सीख भी रहे हैं।
मेरे पास साग का बीज है। हम अभी उसे बो सकते हैं!
खूब सोचा प्यारे! अभी गर्मी भी बिलकुल नहीं है। सूरज डूब चुका है।
तो हम खाली जगह को खोदना शुरू कर दें।
मैं पानी लाऊंगा और बीज भी।
दिलीप और उसके साथियों ने
सब्ज़ी उगाने की कोशिश की
हाय राम, सारे बीज गिर गये।
तुम गये और सब कुछ बरबाद कर डाला।
नहीं। बरबाद नहीं हुआ है। मेरे 'एवरेडी' टॉर्च से हम लोग अंधेरे में भी सारे बीज चुन सकते हैं।
यह रहा! अब हम इन्हें बो डालें।
४ दिनों के बाद!
देखो, साग निकल आया!
अब हम लोग अपना ही बोया साग खा सकेंगे।
लेकिन सब्ज़ी की खेती में बड़ा मज़ा आया। याद है न, तुम्हारी 'एवरेडी' टॉर्च कितनी काम आई थी।